वीर शिवाजी नाटक।

मुद्रक और प्रकाशक

लाला श्याम लाल हीरा लाल श्यामकाशी प्रेस मथुरा।

॥ श्री ॥

महाराष्ट्र वीर शिवाजी ।

नाटक

लेखकः—
"अत्याचारी औरङ्गजेब" "सम्राट् अशोक"
"हिन्दी का सन्देश" इत्यादि नाटकों
और "जासूस लड़की" "करुणा"
इत्यादि उपन्यासों के
रचयिता—

पंडित नत्थीमल उपाध्याय 'बेचैन'
धौलपुरी ।

—❧—

प्रकाशक—
लाला श[illegible]ल हीरालाल
अध्यक्ष श्यामकाशी प्रेस,
मथुरा ।

दूसरी बार] सन् १९३८ ई० [मूल्य ।=)
३२००

जिस वीरात्मा के नायकत्व मे, इस नाटक की रचना की गई है, उस इतिहास-प्रसिद्ध वीर-शिरोमणि महाराज शिवा जी से, ससार का शिक्षित समाज, भली भाँति परिचित है।

इस महापुरुष ने, अन्तिम मुगल-सम्राट् औरङ्गजेब के शाही अभिमान को, कितनी ही बार चूर्ण-विचूर्ण किया, सेना सहित पराजय देकर, उसे कितना छकाया, यह किसी से छिपा नहीं। विधर्मियोके अमानुषिक अत्याचारोका बदला तलवार की उस नोकसे दिया, जिसकी चोट शायद अब तक किसी २ देश-भक्त ....के मर्म-स्थल में यदा कदा हरी हो उठती है। यवन साम्राज्य का उन्मूलन कर, दुःखी भारत का उद्धार ही, उनका परम उद्देश्य समझिये। मानो इसी पवित्र उद्देश्य के लिये, वे वीर-प्रसू जिजाबाई की कोख से आविर्भूत हुये। बाल्यकाल में, अपनी आदर्श माता एवं दादाजी कोणदेव द्वारा, जो शिक्षा मिली, उसने उनके व्यक्तिगत जीवन को, वीरोचित बनाने में, अतुल प्रोत्साहन दिया। केवल १६ वर्ष ही की आयु में, उन्होंने 'तोण' नामी किले पर अधिकार कर लिया। बीजापुर का राज-कोष लूटा और 'कोनकन' पर अपना सिक्का जमा कर, वे एक बड़े प्रान्त के स्वामी बन बैठे। यद्यपि उन्होंने मुसलमानी शासन को जड़ें, बिल्कुल खोखली कर डालीं, किन्तु सामयिक प्रगति के विपर्यय से, न तो जीते-जो उनका उद्देश्य पूर्णतः सफल हुआ,

प्रकाण्ड पण्डित, श्रेष्ठ-गुण-मण्डित, महोदार, परमोपकारी, अनेक भाषाओं के ज्ञाता, तथा मातृ भाषा हिन्दी के प्रवर प्रेमी, धौलपुर राज्यके ला एण्ड मिसलेनियस सेक्रटरी एवं हाईकोर्ट के जज पं० मौलिचन्द्रजी शर्मा एम० ए०एल-एल० बी० के पाणि-पद्मों में यह तुच्छ पुस्तक सभक्ति समर्पित है।

भगवन् आप—

विद्या-विभव-निधान, न्याय गौरव के घर हैं।
तेजस्वी, गुणवान, प्रवीण, दयासागर हैं॥
धर्मनिष्ठ, मतिमान, दुःखितों के दुखहर हैं।
यश में चन्द्र समान, जाति के मौलि प्रवर हैं॥
भक्ति और अनुराग से, लाया हूँ उपहार यह।
करके कृपा-कटाक्ष विभु, करियेगा स्वीकार यह॥

समर्पण-कर्त्ता—

नत्थीमल उपाध्याय "बेचैन"

धौलपुर।

और न बाद को कोई योग्य उत्तराधिकारी ही रहा। इस प्रकार, शरीरान्त के साथ, उनकी उन्नत आकाँक्षाओं का भी अन्त हुआ—मन की साध मन में गई! औरङ्गज़ेब की कैदसे छुटकारा पाना, पच्चीस आदमियों के साथ शायस्ताखाँ को पूना से निकाल भगाना, और अफ़ज़ल खाँ का वध,—उनके जीवन की, ऐसी घटनायें इतिहास के पृष्ठों पर, अमर शब्दों वर्णित हैं।

हाँ, तो इसी "राष्ट्र-वीर शिवाजी" को बालकके रूपमें, आज हम नाटयशाला के रङ्ग-मञ्च पर, अपनी माता से झगड़ते देख रहे हैं।

"माँ! प्राचीन आर्य वीरोंकी शेष कथायें और सुनाओ"

"पहिले प्रतिज्ञा करो, जिन महापुरुषों की कथायें मैं सुनाऊँ, तुम भी उन्हीं के समान आचरण बनाओगे-भविष्य में उन्हीं का अनुकरण करोगे?"

शिवाजी कैसी दृढ़ता से प्रण करते हैं, नाटककार ही के शब्दों में सुनिये—

"आदित्य और अनिल अपने गुण को त्यागदे,
विष के बजाय उगल सुधा चाहें नाग दे।
गीदड़ को देख कर भी सिंह दूर भाग दे,
शीरीं सखुन में पिक को हरा चाहें काग दे॥
ब्रह्मा भी चाहे विश्व में कर्तव्य-भ्रष्ट हो,
मुमकिन मगर नहीं है, मेरा वचन नष्ट हो॥"

सनातन-धर्म के रक्षक, हिन्दू-सङ्गठन के प्रचारक और महाराष्ट्र के निर्माता शिवाजी ने, आगे चल कर, एक पक्के कर्तव्य निष्ठ हिन्दू के समान, अपने प्रण को खूबी के साथ निभाया। हिन्दू स्त्रियों, बालकों, देवालयों और अपने धार्मिक ग्रन्थों का उनके हृदय में जितना आदर था, उतना ही आदर वे मुसलमानी स्त्री-बच्चों, मसजिदों और कुरान इत्यादि का करते थे। परास्त यवनों के स्त्री-बच्चे, उनके सन्मुख लाये गये, उन्होंने तत्क्षण आज्ञा दी—"इन सबको सादर, इनके वर्तमान सम्बन्धियों के समीप पहुँचा दो। भविष्य मे कभी किसी पराजित शत्रु के स्त्री-बच्चों को कैद न किया जाये।"

इसी बीचमें मे कोई सैनिक, कुरान की एक प्रति लाकर देता है। शिवाजी उसे किसी मुसलमान को देने का आदेश करते हुये कहते हैं—"मैं सबल अत्याचारियों से, निर्बलों की रक्षा के हेतु युद्ध करता हूँ। किसी भी अन्य मज़हब या जाति से मेरा कोई द्वेष नहीं। मुसलमान स्त्रियों, मसजिदों अथवा कुरान का, मेरा कोई सैनिक, किसी प्रकार तिरस्कार न करे। इसका उल्लंघन करने वाले को कठोर दण्ड दिया जावेगा।"

दूसरों का यथोचित आदर करने वाले दयालु एवं वीर शिवाजी, भला अपने को अनादरित कब देख सकते थे। औरङ्गजेब के दरबार में, समुचित सम्मान न पाकर, वे सक्रोध बोल उठे—

"जिस ठौर हुआ करता है, सज्जन का तिरस्कार।
उसको भला किस तौर कहें, शाह का दरबार॥"

शत्रुओं ने भी शिवाजी की प्रशंसा की है। यहाँ तक कि औरङ्गजेब का प्रधान सेनापति, उसीके सामने ही कहता है—

" शिवा-सा शेर-दिल देखा नहीं कोई ज़माने मे ।
वो होता है बड़ा खुश शत्रु के मस्तक उड़ाने में ॥
हज़ारों दुश्मनों से वह अकेला जङ्ग करता है ।
जो उसके सामने आताहै, वह तत्काल मरताहै ॥"

यह सुन औरङ्गजेब बोला—"इस पहाड़ी चूहे ने तो मेरी नाक में दम कर दिया। जिसके मुँह से सुनता हूँ, उसकी बहादुरी की तारीफ़ ही सुनता हूँ। वास्तव में वह है भी बहादुर, मेरी फौज लगातार १६ वर्षों से लड़ रही है, तो भी उसका राज्य दिनों-दिन बढ़ता ही जाता है।"

आगे चलिये, शिवाजी मृत्यु-शय्या पर पड़े, कह रहे हैं—"मुझे अपने मरने का शोक नहीं, शोक तो यह है कि, अपने जीवन में देश को स्वतन्त्र न कर सका। निर्बलों की रक्षा न हो सकी।"

देहावसान के कुछ क्षण पूर्व, वे ईश्वर से प्रार्थना करतेहैं—

" सम्पूर्ण जग की पूर्ण ईश्वर कामना करता रहे।
सब निर्बलों के कष्ट को वह सर्वदा हरता रहे॥
मानव-हृदय में प्रेम की वर भावना भरता रहे।
असुरारि के भय से हमेशा दुष्ट-दल डरता रहे॥"

बस, शिवाजी की जीवन-चर्या को, अब अधिक तूल न देकर, हम उनके पिता शाहजी के सम्बन्ध में कुछ लिखेंगे। इस नाटक में, उनका चारित्रिक दृश्य, तीन रूपों में विभक्त किया जा सकता है। पहिले वे एक आदर्श पिता के रूप में सामने आते हैं और योग्य पुत्र के वीरत्व की प्रशंसायें सुन

फूले नहीं समाते। दूसरे अपने प्यारे पुत्र के विरुद्ध युद्ध करने में तत्पर हो स्वामि-भक्ति का उदाहरण देते हैं। बाद को स्वामी की ओर से विश्वासघात होने पर, वे एक क्षत्रिय-वीर के समान प्रगट होजाते हैं।

शम्भुजी, शिवाजी का ज्येष्ठ पुत्र है। वह बड़ा कामी तथा विलासी मनुष्य है। जैसे महाराणा प्रताप, अपने पुत्र अमरसिंह से असन्तुष्ट रहते थे, वैसे ही शिवाजी भी, शम्भु जी से कभी सन्तुष्ट नहीं हुए।

देवराव, शाहजी का दूसरा साला है। अपने बहनोईके साथ विश्वासघात करनेमें नहीं चूकता—पक्का नर-पिशाच है।

त्र्यंकूजी, इसके चरित्र में कोई विशेषता नहीं।

माधवजी, यह शिवाजी का विश्वासी नौकर है। उनके लिये वह अपने प्राण, संकट में डाल देता है।

राऊजी कोणदेव, औरङ्गजेब के आधीन रहते हुए भी आप गुलामी के प्रति घृणा एवं पश्चाताप प्रगट करते हैं। कदाचित् इनकी दशा आज कल के देशी नरेशों से मिलती-जुलती सी है।

दिलेरखाँ, यह मुगल सेनापति है, पर इसमें अपने स्वामी जैसी, धार्मिक कट्टरता, नहीं पाई जाती।

मिश्रजी, इस नाटक में हास्य रस के नायक हैं। इन्होंने वृद्धावस्था में, किसी नव यौवना के साथ विवाह किया है बाद को, जब वे श्रीमती जी को किसी प्रकार भी सन्तुष्ट न कर सके, तब दुःखित होकर बोले—

"करके तुमसे ब्याह, किया है मैंने अतिशय भीषण पाप।
अपने खोटे कर्मों का मैं खुद करता हूँ पश्चाताप।"

अब ज़रा स्त्री-पात्रों की ओर ध्यान देना भी आवश्यक है। अस्तु—

जिजाबाई, यह शिवाजी की माता है। एक विदुषी एवं आदर्श जननी की हैसियत से, इनका चरित्र अनुकरणीय है।

रमा, शम्भुजी की स्त्री है। कामी शम्भु जब रमा की प्यारी सखी रम्भा पर आसक्त होकर, उससे विवाह करना चाहता है और इसके लिये रमा से अनुमति माँगता है, तब प्रेम-विह्वला रमा कहती है—

"तुम सुखी रहो सानन्द रहो, मैं दुःखी रहूँ परवाह नहीं।
मुझपर दुःखगिरि गिरपडे, किन्तु मुखसे निकलेगी आह नहीं॥
दुःसह-से-दुःसह दुःख, नाथ ! मैं स्वयं सदा सह सकती हूँ।
पर तुमको दुखी देखकर, मैं सुख से न कहीं रह सकती हूँ॥
तुम चाहे मुझे न दर्शन दो, पर दुनियाँ का उपकार करो।
मेरी सुधि भले भूल जाओ, पर दीन जनों को प्यार करो॥
जग के सारे बलहीनों का, दुख दूर करो, भय चूर करो।
अज्ञान अविद्या नष्ट करो, दुष्टों का सारा दर्प हरो॥
तुम कभी नहीं 'बेचैन' रहो, मैं नित्य विकल बेचैन रहूँ।
तुम हर्षित विकसित सदा रहो मैं कभी न सूखे नैन रहूँ॥

तुकाबाई, यह शिवाजी की विमाता हैं। उनसे द्वेष रखती है और साथ ही अपने पति शाहजी का भी अनादर किये बिना नहीं रहती।

चपला, हास्य-रस के नायक मिश्रजी की नव-वधू है। यह पहिले तो अपने वृद्ध पतिदेव के प्रति, घृणा-भाव दिखलाती है, उनके प्रत्येक कार्य की कड़ी आलोचना करती है, किन्तु फिर बाद में, पति-प्राण बन जाती है।

ताराबाई, यह एक वीर रमणी है। शिवाजी की पुत्र-वधू अर्थात् उनके छोटे पुत्र राजाराम की सच्ची सह-धर्मिणी है।

अस्तु, नाटक के मुख्य-मुख्य पुरुष एवं स्त्री-पात्रों का परिचय तो संक्षिप्त रूप से दिया जा चुका। अब उसके भाषा क्रम, लेखन-शैली, ढाँचे की सुडौलता, शब्दों, वाक्यों और कविताओं की साज-सँवार के सम्बन्ध मे, केवल इतना ही लिखेंगे कि, लेखक महोदय-प० नत्थीमल उपाध्याय 'वेचैन'-का यह दूसरा प्रयास है-दूसरी रचना है। अतएव इसकी छोटी-मोटी त्रुटियाँ, हमारी समझ से सर्वथा क्षम्य हैं। लेखक की पहिली कृति* से, हमें यह रचना बढ़िया जची। यदि आप ऐसे ही निरन्तर प्रयत्न करते रहे, और हृदय में सच्ची लगन बनी रही, तो आगे चल कर; साहित्य-सेवा के साथ साथ, नाट्य-लेखन-कला में समुचित ख्याति मिलने की बड़ी सम्भावना है।

भारतीय-नाटक-कम्पनियाँ, यदि समुद्र-प्रासिनी-धन पिपासा को शान्त करके, आशिक़-माशूकी के पचड़े में डालने वाले, अश्लील एवं गन्दे नाटकों की ओर से, अपनी विषैली अभिरुचि को हटा, ऐसेही सुन्दर-सुन्दरनाटक खेलें, तो सचमुच ही जनता का बड़ा उपकार हो। नाटक वे होने चाहियें जिनमें देशोन्नति के नयनाभिराम दृश्य हों, सामाजिक कुरीतियों के दमनका निदर्शन हो, और, और हो, ऐतिहासिक, पौराणिक तथा धार्मिक सीन सीनरी का हृदय—

---

* 'अत्याचारी औरङ्गजेब' नाम का एक नाटक, इससे पहिले निकल चुका है।

❀ स्त्री-पात्र ❀

जीजाबाई	शिवाजी की माता, शाहजी की रानी।
तुकाबाई	व्यंकूजी की माता, शाहजी की दूसरी स्त्री
सईबाई	शिवाजी की स्त्री।
चपला	मिश्रजी की स्त्री।
चम्पा	चपला की सखी।
रमाबाई	शम्भुजी की स्त्री।
रम्भा, कमला, विमला, और प्रभा	रमाबाई की सहेली।
ताराबाई	राजाराम की स्त्री।

इसके अतिरिक्त दासी, मुसलमान स्त्रियाँ, नाचने वाली आदि।
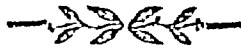
ओ३म्

महाराष्ट्र वीर शिवाजी

नाटक

स्थान—रंगमंच।

(सूत्रधार, नट, नटी इत्यादि समस्त पात्रों का ईश्वर प्रार्थना करते हुए दृष्टि आना)

सब—(हाथ जोड़कर) ॐ गायन ॐ

करुणानिधि, केशव-कर्त्तार।
खल-घालक, जन-पालक, जगपति, यश-सौरभ-भण्डार।
कर्णधार—पतवार आप हैं, भय-दुख-सिन्धु-मझार॥
करदो सब दुखियों को पार। करुणानिधि०॥

भगवन्, देश-शिरोमणि भारत।
पारतंत्र्य-अघ से है आरत॥
अत्याचार सबल करते हैं।
नहीं आपसे कुछ डरते हैं॥

दुखियों की क्या नहीं नाथ! तुम, सुनते करुण-पुकार।
दीन जनों को नहीं आप अब, करते क्या कुछ प्यार।
दीन-बन्धु कहलाते हो तो करो कष्ट—संहार॥
करिये अब मत अधिक अबार। करुणा०॥

दुखहर, सुख कर, चलधर, कलधर करते हो उपकार।
नटनागर, मति सागर तुम हो जग के पालनहार॥

अवनति का प्रतिकार कीजिए ।
दुर्गति से निस्तार कीजिए ॥
उन्नति-जीवन जगा दीजिए ।
दम्भ-द्वेष-भय भगा दीजिए ॥

धृति[1]-दायक "बेचैन"—नाथ तुम हो अशरण[2] -आधार ।
दीन-हीन-बलहीन—जनों का करते हो उद्धार ॥
जब स्वतन्त्र सब धरणी होगी ।
प्रवर प्रेम की वरणी[3] होगी ॥
पार दुःख से तरणी होगी ।
प्रगट तभी तव[4] करणी[5] होगी ॥

जुल्मों से पीड़ित निबलों की अति दुर्दशा निहार ।
निराकार, साकार लीजिये भारत में अवतार ॥
करिये अब मत सोच विचार ।
करुणानिधि केशव कर्त्तार ॥

(सूत्रधार और नटी के अतिरिक्त सब का प्रस्थान)

सूत्रधार—आई नाथ ! घुमड़ घटा दुःख की चारों ओर ।
अवनति-रजनी छागई सब भारत में घोर ॥
सब भारत में घोर, सुखोन्नति-रवि प्रगटादो ।
भारत खण्ड में प्रभो ! प्रेम का सिन्धु बहादो ॥
बरसादो यश-सलिल सुधा के सम सुखदायी ।
नष्ट करो दुःख-घटा घुमड़ जो है विभु आई ॥

---

१ धृति = धैर्य, सुख । अशरण = आश्रयहीन ३ वरणी = वधू, बहू । ४ तव = तुम्हारी । ५ करणी = कर्म, कार्य ।

नटी—नाथ ! आजकल निरन्तर भव्य भारतवर्ष अधः पतन की ओर अग्रसर क्यों हो रहा है ? वह परतन्त्रता के कठोर बन्धनमें जकड़ा हुआ अपने भाग्य को क्यों रो रहाहै ? दिन प्रति दिन हिन्दू जाति के ह्रास और भारतवासियों के दुःख पास बनने का क्या कारण है ? हम सब भारतीय दुःख सागर से किस प्रकार पार होसकते हैं ? इसका कोई उपाय बतला कर, मेरे हृदय की चिन्ता मिटाइये ।

सू०—प्रिये ! हमारी घरू फूट और चरित्रहीनता ही ने हमारे प्यारे आर्य्यावर्त और हम समग्र भारतवासियोंकी यह दुर्दशा की है । हम ईश्वर की भक्ति, तथा अपने कर्त्तव्य कर्म्म को भूलकर, नितान्त नास्तिकता, अकर्मण्यता, आलस्य अघ, अधर्म्म, अविद्या, अज्ञान, और भयानक भ्रान्ति तथा भीषण व्यभिचार के बहुत बुरी तरह शिकार हो रहे हैं, यही हमारे सर्वनाश और अधःपतन का एक मात्र प्रधान कारण है । जब हम समस्त भारतवासी अपनी सम्पूर्ण भीषण भूलों को भूल कर, प्रमा * तथा प्रेम के पारावार में डुबकियाँ लगाने लगेंगे । और देश तथा जाति के लिये अपने प्राण निछावर करने को सर्वदा तत्पर रहेंगे । अपने जीवन का सहर्ष बलिदान करदेंगे, परन्तु अपने कर्त्तव्य पथ से तिल भर भी नहीं हटेंगे । तभी हमारा और हमारे देश का दुःख सिन्धु से निस्तार होगा । हमारे सम्पूर्ण संकटों का संहार होगा ।

नटी—परन्तु नाथ ! यह तो बतलाइये कि अपने देश-वासियों को ठीक मार्ग पर किस प्रकार लाया जावे और

---

*प्रमा = यथार्थ ज्ञान अर्थात् भ्रम रहित ज्ञान ।
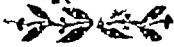
उनके कानों तक यह सदुपदेश कैसे पहुँचाया जावे? किस साधन द्वारा उन अचेतों को सचेत बनाया जावे?

सूत्र०—इस कार्य की सिद्धि के लिये कोई नवीन शिक्षाप्रद नाटक स्टेज पर दिखाया जावे।

नटी—इसके लिये कौनसा नाटक आपने उपयुक्त समझा है।

सूत्र०—मेरे विचार से भव्य भावों से भरा हुआ धवलपुर निवासी पं० नत्थीमल उपाध्याय "बेचैन" की लेखनी से निकला हुआ "महाराष्ट्र वीर शिवाजी नाटक" स्टेज पर दिखलाया जावे। उसी के द्वारा भारतवासियों को देश भक्ति तथा जाति प्रेम का समुज्वल पाठ पढ़ायाजावे।

नटी—नाथ! कदाचित् आप उसी वीर शिवाजी का नाम ले रहे हैं—

जिसको अपना देश प्राण से भी था प्यारा।
जिसने उसके हेतु दे दिया जीवन सारा॥
निर्बल के त्राणार्थ खड्ग था जिसने धारा।
समरभूमि मे सदा दुष्ट दल को संहारा॥
नित्य कठिन संकट सहे, पर हिम्मत हारा नहीं।
हाहा खाते को कभी, जिसने था मारा नहीं॥

सूत्र०—हाँ हाँ वही—

शिवानाथ के तुल्य सुभट जो समर कुशल था।
रिपुदल में जो शीघ्र मचा देता हलचल था॥
विपदा मे था धीर धर्म्म-पथ पर अविचल था।
निधनों का था द्रव्य और निबलों का बल था॥

शिवानाथ=शिवाजी।

उसी शिवाजी नृपति का नाटक तुम दिखलाइए ।
सब जनता को शौर्य का, प्यारा पाठ पढ़ाइए ॥

नटी—जो आज्ञा नाथ ! (जाना चाहती है)

सूत्र०—ठहरो, जानेके पूर्व कुछ गाना गाती जाओ । उसके पश्चात् नाटक प्रारम्भ कराओ ।

नटी—बहुत अच्छा ।

(सूत्रधार और नटी दोनों गाते हैं)

❁ गायन ❁

परस्पर रखो प्रेम-व्यवहार ।
ईश्वर और विश्व के नाते करो सभी को प्यार ॥
अगर धनी हो तो निधनों को दीजे धन भरपूर ।
अपने धन से सकल जक्त की करो दीनता दूर ॥
यदि हैं बली आप तो हरिये निबलों के सब कष्ट ।
सब जग से अत्याचारों को शीघ्र कीजिये नष्ट ॥
छिपा है इसमें जीवन-सार ।
परस्पर रखो प्रेम व्यवहार ॥
दम्भ-दासता-द्वेष नसाकर, करिये प्रेमो-प्रचार ।
अघ अन्याय-अनीति हटाकर, भरिये सुख भंडार ॥
जीवन का उद्देश्य बनालो केवल पर-उपकार ।
तभी तुम्हें नर कहलाने का होगा वह अधिकार ॥
मिटादो सब झगड़ा तकरार ।
परस्पर रखो प्रेम व्यवहार ॥

(दोनों का प्रयाण)
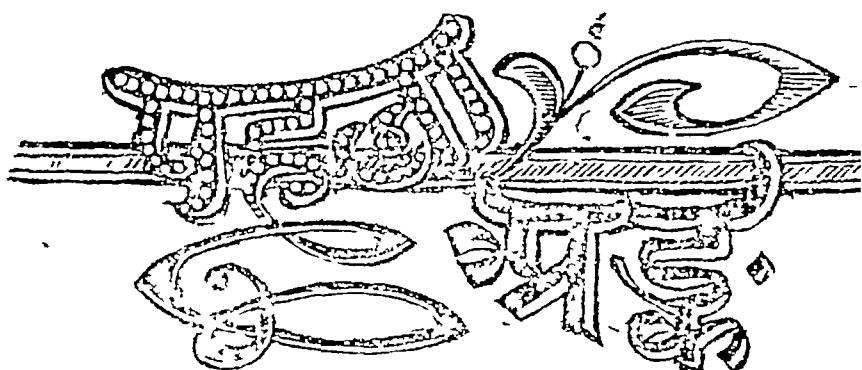
प्रथम दृश्य

स्थान—पूना शाहजी भौंसला का महल।

(जीजाबाई और शिवाजी का बैठे हुए दिखलाई देना)

शिवा०—माताजी ! रामायण की पूर्ण कथा तो आप मुझे सुना चुकीं, और महाभारत मे से देवव्रत [अर्थात् भीष्म पितामह, धृतराष्ट्र तथा पाण्डु के चरित्र श्रवण कर चुका हूँ। अब आज महाभारत की कोई उत्तम कहानी सुनाइये। कृपा कर विलम्ब न लगाइये।

जीजाबाई—अब कहानी तब सुनाऊँगी, जब कुछ तुमसे प्रतिज्ञा करालूंगी।

शिवा०—माताजी ! वह प्रतिज्ञा क्या है ? शीघ्र बताइये। मैं अपनी माता तथा प्रिय पिता के हित हेतु भीष्म पितामह के समान भीष्म से भीष्म और कठिन से कठिन प्रतिज्ञा करने को सदैव तत्पर हूँ।

जीजा०—परन्तु क्या मैं विश्वास कर सकती हूँ कि तुम अपनी प्रतिज्ञा का पालन करोगे !

शिवा०—अवश्य ! प्राण रहते मैं अपने प्रण का पालन

अवश्य करूंगा—

"आदित्य और अनिल अपने गुण को त्यागदे।
विष के बजाय उगल सुधा चाहे नाग दे॥
गीदड़ को देख कर भी सिंह दूर भाग दे।
शीरीं सखुन में पिक को हरा चाहे काग दे॥
ब्रह्मा भी चाहे विश्व में कर्तव्य-भ्रष्ट हो।
मुमकिन मगर नहीं है, मेरा वचन नष्ट हो॥"

जीजा०—पुत्र! तुम इस बात की प्रतिज्ञा करो कि मैं जिन महापुरुषों की कहानी तुमको सुनाऊँगी उनके शुभ चरित्रों पर तुम पूर्ण ध्यान दोगे और उनके ही समान कार्य्य करने को प्राण पण से पूर्ण चेष्टा करोगे।

शिवा०—माताजी! मैं शपथ पूर्वक प्रतिज्ञा करता हूँ कि अपने आपको उन्हीं के समान बनाने का प्राण पण से पूर्ण उद्योग तथा प्रयास करूंगा। अब आप कृपा करके कहानी प्रारम्भ कीजिये।

जीजा०—अच्छा! ध्यान पूर्वक सुनो। महाराज पाण्डु के पाँच पुत्र थे। उनके नाम थे युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, सहदेव और नकुल। सबसे ज्येष्ठ पुत्र युधिष्ठिर बड़े सत्यवान सत्यव्रत पालक, धर्म्म धुरन्धर और धर्म्मनिष्ठ थे। वे बिल्कुल "प्राण जाँहि पर वचन न जाहीं" के अनुसार चलते थे। उनके हृदय में सत्य और धर्म्म का ही दीपक बलता था, असत्य और अधर्म्म उनको देखकर कोसों दूर भागते थे। वे धर्म्म के प्रतिकूल स्वप्न में भी कभी एक कदम न चलतेथे, इसी कारण उनका दूसरा नाम धर्मराज पड़गया। दूसरे पुत्र भीम उस समय बल में अद्वितीय थे। वे बड़े लम्बे और अधिक से

अधिक मोटे वृक्षों को केवल एक झटके में उखाड़ डालते थे। बल के अतिरिक्त वे गदायुद्ध में भी सुदक्ष थे। पाण्डु के तीसरे पुत्र अर्जुन धनुर्विद्या मे अत्यन्त निपुण थे। उन अकेले का सामना लाखों मनुष्य नहीं कर सकते थे। समरक्षेत्र में लाखों मनुष्यों पर वे अकेले हा विजय प्राप्त करते थे। उनके गाण्डीव धनुष की टंकोर सुन कर अच्छे अच्छे वीरों के छक्के छूट जाते थे, कानों के परदे फूट जाते थे। महाराज पाण्डु के लघु पुत्र नकुल और सहदेव भी तलवार चलाने में अद्वितीय थे।

(दासी का प्रवेश)

दासी—(आकर) श्रीमती जी ! सरकार बीजापुर से पधारे है।

जीजा०(प्रसन्न होकर) अहा ! क्या प्राणनाथ पधारे है ? तब तो धन्य भाग्य हमारे हैं। कमलाबाई जाओ, महाराज की आरती के लिये शीघ्र थाल सजाकर लाओ।

(दासी कमलाबाई का जाना और शीघ्र ही दीपक युक्त थाली लेकर आना)

शिवा०—माताजी ! क्या हमारे प्रिय पिताजी आये हैं ?

जीजा०—हाँ, पुत्र। वे ही तशरीफ लाये हैं।

(शाहजी का प्रवेश)

जीजा०—(आरती करके)—

जय पति परमेश्वर प्रभो, परमधाम सुखधाम।
दासी का स्वीकार हो, बारम्बार प्रणाम॥

शिवा०—(हाथ जोड़कर) पिताजी ! इस चरण सेवक का भी चरणस्पर्श और प्रेम परिपूर्ण प्रणाम स्वीकृत हो।
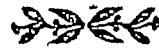
शाहजी—पुत्र ! चिरंजीवो हो। आओ मैं तुमको अपने हृदय से लगाकर, संसार का सच्चा सुख प्राप्त करूं। (शिवाजी को छाती से चिपटा कर) अहा ! अतीवानन्द है महान् आनन्द है। जिस प्रकार कि सिन्धुको अपने पुत्र पूर्ण चन्द्र का अवलोकन करके, परम सुख और महाआनन्द प्राप्त होता है, और वह प्रसन्नता के मारे अपने शरीर में नहीं समाता अर्थात् वह अपनी असली हद से बाहर निकलजाता है, उसी प्रकार तुम्हारा चन्द्रमुख देखकर मैं भी प्रसन्नता के मारे अपने अङ्ग में नहीं समाता हूँ। जिस प्रकार शशिकिरणों के स्पर्शमात्र से सागर को अतीव आनन्द प्राप्त होता है, उसी प्रकार तुम्हारे शरीर के स्पर्श से मुझे महानन्द प्राप्त होता है। अपने सुयोग्य सुपुत्र का मुख मंडल देखकर किस पिता का अन्तःकरण प्रफुल्लता से परिपूर्ण न होजायगा ? किसके हृदय में हर्ष अपना डेरा न जमायगा ? वे मनुष्य यथार्थ में भाग्यहीन हैं जो पुत्र स्नेह से वञ्चित हैं। मुझे पूर्ण आशा है कि जिस प्रकार सिन्धुसुत चंद्रमा ने सम्पूर्ण संसार में अपना प्रकाश फैला कर अपने पिता पारावार को पूर्ण प्रफुल्लता प्रदान की है, उसी प्रकार तुम भी समस्त संसार में अपना सुयश रूपी प्रकाश छिटका कर मेरे हृदय तथा आत्मा को शान्ति तथा सुख प्रदान करोगे। अपनी सुकीर्ति द्वारा अपने वंश, अपनी जाति और मेरे नाम को उज्ज्वल करोगे। सचमुच तुम एक भविष्णु बालक हो। पुत्र ! इस समय तुम क्या कर रहे थे ?

शिवा०—माताजी से महाभारत के वीरों तथा महापुरुषों की जीवनियाँ सुन रहा था।

शाह०—किन २ महापुरुषों की कहानियाँ सुन चुके ?

शिवा०—रामायण की सम्पूर्ण कथा तो माताजी मुझे सुना चुकी हैं। महाभारत में से भीष्म पितामह, धृतराष्ट्र तथा महाराज पाण्डु के चरित्र श्रवण कर चुका हूँ। अब युधिष्ठिर भीम, अर्जुन आदि की कथा माताजी मुझे सुना ही रहीं थीं कि जब तक आपके आने की सूचना मिली।

शाहजी—जिनकी माता सुशिक्षिता तथा विदुषी होगी, वे बालक होनहार तथा कर्तव्य निष्ठ क्यों न होंगे ? (जीजा बाई से) प्रिये ! तुम धन्य हो। प्रचुर प्रशंसा के योग्य हो, जो तुम अपने पुत्र को ऐसी श्रेष्ठ शिक्षा देती हो।

भारत को तुम्हारे समान सुशिक्षिता तथा विदुषी माताओं की आवश्यकता है। यदि तुम्हारे ही समान भारत वर्ष की प्रत्येक नारी होजाँय तो भारत की डगमगाती नौका पार होजाये और हिन्दू जाति का उद्धार होजाये। (स्वगत) यदि मातायें स्वयं योग्य न होंगी तो फिर वे भला अपनी सन्तान को क्या योग्य बनायेंगी। क्या एक अशिक्षित तथा मूर्खा माता भी अपनी संतान को विद्वान, बुद्धिमान् निपुण वीर तथा साहसी बना सकती हैं ? कदापि नहीं (जीजाबाई से) प्रिये ! इस समय शिवा की आयु लगभग नौ वर्ष के हो चुकी है। तुम्हारी शिक्षा का समय समाप्त होगया। इसलिये मेरा विचार है कि इसको किसी योग्य पण्डित द्वारा सम्पूर्ण विद्याओं की शिक्षा पूर्ण रूप से दिलवाऊँ पं० दादाजी कोण देव नामक एक धुरन्धर विद्वान यहाँ पर हैं वे सम्पूर्ण शास्त्रों के आचार्य और पूर्ण ज्ञाता हैं। इस लिये मेरी इच्छा है कि उन्हीं के ऊपर इसकी शिक्षा का भार डालूं, क्योंकि उनसे

उत्तम कोई दूसरा ब्राह्मण शिवा के गुरु बनने योग्य मेरी दृष्टि में नहीं आता। दो चार दिन पश्चात् मैं इसको दादाजी कोण देव के आश्रम में ले जाऊँगा। और जब तक यह समस्त विद्याओं में अच्छी प्रकार निपुण न हो जायगा, तब तक उनके ही निकट रहेगा। कहो तुमको मेरी बात स्वीकार है?

जीजा०—प्राणनाथ! आपकी बात से मुझे कब इन्कार है? पत्नी को अपने पति के प्रतिकूल चलने का कहाँ पर अधिकार है? (पर्दा गिरता है)

दूसरा दृश्य

स्थान—पूना, दादाजी कोणदेव का मकान।

(दादाजी का कुरसी पर बैठे हुए, और लड़कों का पढ़ते हुए दृष्टि आना)

पहिला लड़का—करुणानिधि रघुवीर कृपाला।
दूसरा " भक्त भूत भंजन दीन दयाला॥
तीसरा " पदपंकज रघुनन्दन स्वामी।
चौथा " घट घट व्यापक अन्तरयामी॥
पाँचवाँ " नवल नील तन आनन मनोहर।
छठवाँ " चपलापति [illegible] भव भीरा॥

दादाजी०—क्या तुम सबने अपना २ पाठ याद कर लिया?

सब लड़के—जी हाँ गुरुजी महाराज।

दादाजी—अच्छा तो अब इतिहास कथा श्रवण करो, इसके पश्चात् शस्त्र विद्या और मल्लयुद्ध की शिक्षा प्राप्त करने के हेतु मैदान में चलना।

सब—बहुत अच्छा भगवन् !

दादाजी—पुत्र शिवा, कहाँ तक इतिहास समाप्त होगया तुमको स्मरण है ?

शिवा—स्मरण है गुरुदेव ! कल आप महाभारत के समस्त वीरों की कथा समाप्त कर चुके । महाभारत समाप्त होजाने पर आपने कहा था कि कल से राजस्थान का इतिहास प्रारम्भ होगा ।

दादाजी-ठीक है । मैं आरम्भ करता हूँ,ध्यान देकर सुनो परन्तु आज इतिहास बहुत थोड़ा सुनाऊँगा, क्योंकि शस्त्र-विद्या के विषय में मुझे आज तुमको बहुत अधिक बतानाहै । अच्छा, सुनो "राजस्थान अर्थात् राजपूतानेमें अरावली पर्वत के निकट मेवाड़ नामक एक पहाड़ी प्रदेश है । वह अत्यन्त स्वतंत्रता प्रिय देशहै । वहाँ का प्रत्येक स्त्री पुरुष तथाबालक बालिका स्वाधीनता के स्वच्छ वायु में पला है । प्रत्येक वृक्ष स्वातंत्र्य के स्वच्छ समीर में फला और फूला है । वहाँ का प्रत्येक जड़ तथा चैतन्य जीव सदैव स्वतंत्र रहा है, परतंत्रता की डोरसे कभी नहीं जकड़ा गया । वहाँका शासक महाराणा कहलाता है । मेवाड़ की राजधानी पहिले चित्तोड़ थी और अब उदयपुर है । वहाँ का प्रत्येक राना महाबली, महाप्रताप वान, महावीर तथा महा पराक्रमी हुआ है । राना ही क्या? वहाँ का बच्चा२ अकथनीय वीर है । परम गम्भीर और रण धीर है । दिल्लीके मुसलमान बादशाहों ने अनेकबार चित्तौड़ को हस्तगत करने की पूर्ण चेष्टा की, परन्तु वे प्रत्येक बार विफल मनोरथ रहे, और हर बार उनको बुरी तरह मुँह की खानी पड़ी । राजपूतों ने उनको हरबार बुरी तरह हराया ।

मेवाड़ का राजवंश भगवान् रामचन्द्रजी का वंशज है, और यहाँ के राणा परमपवित्र शिशोदिया कुल के हैं। उनमें पूर्ण क्षत्रियत्व तथा वीरत्व विद्यमान है। संसार में आजकल कोई भी वीर उनके समान नहीं है, वैसे तो मेवाड़ का प्रत्येक ही राना महा पराक्रमी तथा असाधारण वीर हुआ है। परन्तु मेवाड़ के शासकों में संग्रामसिंह उपनाम राणा साँगा एक परम प्रतापवान् तथा अद्वितीय वीर होगयेहैं। उनके सम्पूर्ण शरीर में ऊपर से नीचे तक तलवार, बन्दूक, बरछी, भाला इत्यादि के अस्सी गहरे घावों के चिह्नथे। एक लड़ाईमें राना की एक आँख फूट गई थी, एकमें एक बाँह टूट गईथी, और एक में एक पाँव बेकार होगया था। तो भी जब वे घोड़े पर सवार होकर युद्धक्षेत्र में कूद पड़ते थे तो बड़े २ वीरों के छक्के छूट जाते थे। शत्रुओं का सारा साहस तथा उत्साह भङ्ग होजाता था। उनका मुख बदरङ्ग होजाता था। शत्रुगण एक प्रकार से बिल्कुल निराश होजाते थे। उनके वैरी स्वयं उनकी अद्वितीय वीरता की प्रशंसा करते थे। राना संग्राम सिंह के पौत्र स्वनामधन्य महाराणा प्रतापसिंह अपने दादा राना साँगा से भी अधिक प्रतापवान तथा विक्रमी वीरयोद्धा हुए हैं। उनकी सुन्दर शिक्षा प्रद जीवनी मैं कल से वर्णन करूंगा। अब तुम लोगों को शस्त्र विद्या सीखने के लिये चलना चाहिये। क्योंकि अब तुम्हारा अस्त्र-विद्या सीखने का समय होगया।

सब लड़के—चलिये गुरुदेव! हम सब तत्पर हैं।

(सबका जाना, पर्दा गिरना)
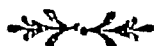
तीसरा दृश्य

स्थान—बीजापुर, शाहजी का मकान।

(तुकाबाई व शाहजी का बैठे हुए दृष्टि आना)

शाहजी-प्रिये ! शिवा बड़ा होनहार मालूम होताहै । वह अब सम्पूर्ण अस्त्र शस्त्र विद्या में पूर्ण प्रवीण हो चुका है। परीक्षा के दिन उसका शस्त्र विद्या कौशल तथा अद्भुत चमत्कार देख कर मै अवाक् रह गया। मुझे पूर्ण विश्वास है कि वह अवश्य महापुरुष कहलायेगा। अपनी सुयश पताका समस्त संसार मे फहरायेगा। अपनी वीरता की दुन्दुभि विश्व में बजायगा। अपने वंश, जाति, और मेरे नाम को उज्जवल बनायगा। उसके हृदय में देश-प्रेम,जाति-प्रेम तथा धर्म्म-प्रेम का सागर परिपूर्ण भरा है। इसकी मैंने पूर्ण परीक्षा की है—

देश हित वह प्राण देने को सदा तैयार है।
प्राण तन उसका सभी निज जातिपर बलिहारहै॥
धर्म्म हित सर काटलो उसको नहीं इन्कार है।
सर्वस्व देना निबल हित उसको सदा स्वीकार है॥

तुकाबाई-जब देखो तब आप शिवा कोही झूठी तारीफ़ किया करते हैं। सदैव उस छोकड़े का ही गुन गाया करतेहैं। मेरा तो उसकी मिथ्या प्रशंसा सुनते २ दिल ऊब गया।

प्राणपति ! यह शिवा का मिथ्या प्रशंसावाद है।
तारीफ़ उसको के लिये मुँह आपका घननाद है॥
ऐसी थोथी बात से दिल मेरा अति नाशाद है।

मैं समझती हूँ आपको अब और कुछ नहीं याद है ॥
प्रेम की बातें तुम्हारी अब सभी काफ़ूर हैं।
प्रीति के वे शब्द प्यारे अब तो कोसों दूर हैं ॥
आपके मानस में मेरा अब न बाकी प्यार है।
जब देखिये तब शिवा की तारीफ़ की गुफ्तार है ॥

शाह०—प्रिये! शिवा का प्रशंसावाद तुमको क्यों नहीं भाता है। उसकी सच्ची तारीफ़ सुनकर तुम्हारा दिल क्यों ऊब जाता है। इसका रहस्य मेरी समझ में नहीं आता है।

(माधवजी का प्रवेश)

माधव०—श्रीमान्! आपके वीर पुत्र शिवाजी ने मुसलमानों के विरुद्ध तलवार उठाई है। देश की सेवा और गौ, तथा ब्राह्मणों की रक्षा करने की उनके हृदय में समाई है। यवनों के राज्य में उन्होंने खलबली मचाई है। हिन्दू जनता में चारों ओर शिवाजी की दुहाई है। उन्होंने तोरण (तोर्ना) रायगढ़, कोनकन और कल्याणगढ़ के किलों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया है। अब वे समस्त हिन्दू जाति को सुसङ्गठित करने के उद्योग में लगे हुए हैं।

शाह०—(स्वगत) मैं धन्य हूँ जो मुझे शिवाजी सा अमूल्य पुत्र रत्न प्राप्त हुआ है। मेरी यही अभिलाषा है कि परमेश्वर प्रत्येक मनुष्य को, यदि पुत्र प्रदान करे, तो शिवाजी के समान ही पुत्र रत्न दे। (प्रकट) इस समय शिवा कहाँ पर है?

माधव०—श्रीमान्! वे पूना में अपने सङ्गठन के कार्य्य में लगे हुए हैं। पश्चिमीघाट की सम्पूर्ण पहाड़ी जाति उनका साथ देने को तैयार है। मावली नामक प्रसिद्ध साहसी पहाड़ी

चट्टू और भाड़े के टट्टू हैं। जब से मैं इस घरमें ब्याही आई हूँ एक दिन भी सुख नहीं पाया। निगोडमारे की कमाई में एक दिन भी न अच्छे कपड़े पहिने और न अच्छा खाना खाया। ज़िन्दगीका कोईभी मज़ा न उड़ाया। मैं ऐसी सुन्दर अलबेली नार, और यह कलमुँहा बुड्ढा मेरा भरतार। हा कर्त्तार! यही है क्या तेरा विचार? हिन्दू समाज यह तेरा कैसा व्योहारहै? हम अबलाओं पर यह तेरा कैसा अत्याचार है? जो बालिकाओं तथा नव यौवनाओं का विवाह साठ साठ सत्तर-सत्तर वर्ष के बूढ़ों के साथ कर दिया जाता है। हमारा असह्य हृदय वेदना को देखकर भी तू तर्स नहीं खाता है। हमारी दुर्दशा को लखकर भी तू दया नहीं लाता, हा! विधाता! मै क्या ऐसे कंजूस, मक्खीचूस बुड्ढे के साथ ब्याहे जाने योग्यथी? क्या किसी राजा अथवा राजमन्त्री के अयोग्य थी? हे विधाता! तैंने मुझको क्यों बनाया? बनाया भी तो ऐसा सुन्दर बनाया न होता, और मेरी रूप वाटिका को एक अयोग्य मालीके हाथमें फँसाया न होता। क्या यही तेरी बुद्धिमानी है कि रेशम मे टाट की गोट लगाई, और मेरी जोड़ी कंजूसों के सरदार बुढ्ढे बाबा के साथ मिलाई। इतने दिनों तक सृष्टि रचाई, तो भी बुद्धि न आई। ब्रह्मा! तुम्हारी सृष्टि में, ये भारी भूल है।

सौन्दर्य्य और यौवन मेरा फिजूल है।
जग रूप वाटिका में, जङ्गल का फूल है॥

मिश्रजी—(प्रवेश करके)—

दिल में तेरे दुख दर्द है, मम शिर में शूल है।
आपका वक्तव्य नारी धर्म्म के प्रतिकूल है॥

चपला-(झुँझला कर) अजी, बस रहने दो। बड़ी स्त्री धर्म की शिक्षा देने वाले आये। कभी अपना कर्त्तव्य भी पालन करते हो कि दूसरे को ही शिक्षा देने चले हो।

मिश्रजी-मैं अपने किस कर्त्तव्य का पालन नहीं करता? जो ब्राह्मणों का धर्म और कर्त्तव्य है उसका नित्य तो पालन करता हूँ। यदि बाज़ार में किसी चमार अथवा अन्य किसी शूद्रजाति के किसी मनुष्य के संयोग से मेरा शरीर स्पर्श हो जाता है या किसी भंगी की छाया मेरे ऊपर पड़ जाती है तो मैं कभी भी घर के अन्दर बिना स्नान किये नहीं घुसता।

चपला—क्या यही ब्राह्मणों का धर्म और कर्त्तव्य है?—

कहला सकता यह नहीं, विप्रों का कर्त्तव्य।
यह है तुमसे दम्भियों का मिथ्या वक्तव्य॥

मिश्र०—दम्भी कहती स्वपति को, है तू कैसी नार।
चपला तुझसी नारि का, जीना है धिक्कार॥

चपला-अच्छा महाराज! दम्भी नहीं। यह आपके समान अपूर्व विद्वान्, मतिमान्, गुणवान्, वेदाचार्यों और धर्म-धुरन्धरों का धर्म और कर्त्तव्य है।

चम्पा—(प्रवेश करके) जी हाँ! यह इनके ही समान धर्मध्वजियों का धर्म और कर्त्तव्य है कि जो यह अपने छोटे निर्धनों तथा निर्बल भाइयों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। उनको तुच्छ और स्पर्श न करने योग्य समझते हैं। शूद्रजाति ब्राह्मणों को अत्यन्त श्रद्धा की दृष्टि से देखती है, उनको देवताओं के तुल्य लेखती है। विप्रों के अतिरिक्त वह क्षत्रिय एवम् वैश्य जातियों का भी महान आदर तथा सत्कार करती है। इसके विपरीत उच्च जातियाँ शूद्रों का तिरस्कार करती

हैं। शूद्र वर्ण तथा भंगी जाति के स्त्री पुरुष अपने बड़े भाई बहिनों अर्थात् उच्च जाति के स्त्री पुरुषों के लिये नीच से नीच और घृणित से घृणित कार्य करने में किञ्चिन्मात्र भी नहीं झिझकते। अपने बड़े बुद्धिमान्, विद्वान् तथा बलवान भाइयों की प्रत्येक सेवा करने और उनकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करने के लिये वे सदैव तत्पर रहते हैं। उनके हित हेतु वे अपने प्राण देने को भी उद्यत रहतेहैं। परन्तु शोककी बात है कि उच्च जातियों के स्त्री पुरुष उनको तन, मन, धन में से किसी भी वस्तु द्वारा सहायता नहीं करते। उनको बलविद्या तथा बुद्धि प्रदान करके योग्य नहीं बनाते। उनको सबल विधर्मियों द्वारा पिटते हुये देख कर भी उनकी रक्षा और सहायता नहीं करते। यह ब्राह्मण,क्षत्रिय और वैश्योंकी बहुत भारी भूल है। यह बात नीति और न्याय के प्रतिकूल है। इसका दुष्परिणाम यह होता है कि शूद्र आदि के बहुत से स्त्री पुरुष अपने प्रिय हिन्दू धर्म का परित्याग कर मुसलमान और ईसाई होजाते हैं। इस प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रियों और वैश्य जातियों के मनुष्य अपनी ही कुरीतियों तथा दुर्व्यवहार द्वारा दिन प्रतिदिन अपने हिन्दूधर्मकी जनसंख्याको घटातेहैं।

चपला—और वे ही शूद्रजाति के स्त्री पुरुष,जिनको वह अपने निकट बिठलाने में अपना अपमान समझतेहैं और उन के स्पर्शमात्र से ही हम अपने को अपवित्र समझते हैं, जब मुसलमान या ईसाई होजाते हैं तो हमारे पास वे रोक टोक बैठते हैं। और हमारे खान पान तथा हर्षोत्सवों में सम्मिलित होते हैं। यहीं नहीं, प्रत्युत उनमें से बहुत से हमारे ऊपर हुकूमत करते हैं।

मिश्रजी—भई तुम दोनों ने तो पूरा व्याख्यान दे डाला। और तुम्हारे इस भाषण ने मेरे इस कमल से हृदय को हिला डाला।

चपला—ओ हो! तो क्या आपका कलेजा स्त्रियों से भी अधिक नाजुक है?

मिश्रजी—आज कल की स्त्रियों में और मुझमें अन्तर ही क्या है? जो कोई मुझ और वर्त्तमान कालीन स्त्रियोंमें कुछ भी भेद समझता है वह मेरी समझ से महामूर्ख है। मैं आज कल की नारियों से अधिक डरता हूँ, उनसे अधिक झिझकता हूँ, उनसे अधिक लज्जा करता हूँ, इसके विपरीत बेशर्म भी एक नम्बर का हूँ।

चपला—इसके अतिरिक्त ललनाओं के से और भी लक्षण हैं अथवा केवल यही हैं।

मिश्रजी—इतने ही नहीं हैं, अभी तो बहुत बाकी हैं।

चपला—उनको भी बतलाओ वे कौन २ से हैं?

मिश्रजी—आजकल की स्त्रियाँ अत्यन्त बुद्धिमान और प्रवीण होती हैं। उन्हीं के समान मैं भी इतना चतुर हूँ कि मैंने अपने बुद्धिबल द्वारा एक आकस्मिक महान संकट से अपने प्राण बचा लिये।

चपला—वह किस प्रकार?

मिश्रजी—अभी सब बतलाता हूँ सरकार! ध्यान देकर सुनिये मेरी गुफ्तार। एक रात्रि को जब मैं अपने शयनागार में सो रहा था कि अकस्मात्—

चूहे ने खटखट करी, थी अँधियारी रैन।
छिपा चारपाई तले, प्राण बचाये चैन॥

चम्पा—तब तो आपने निश्चय ही वीरता में अर्जुन को मात कर दिया। आप सचमुच ही वीर हैं।

मिश्र०—क्या मेरे वीर होने में कोई कसर है?

चम्पा—नहीं, महाशय! आप में सचमुच भीम का असर है।

चपला—अच्छा, आपमें स्त्रियों के और क्या २ लक्षण हैं? वह भी बतलाइये।

मिश्र०—तो उसे सुनने के लिये मेरे मुख के निकट अपना कान लगाइये।

चपला—नहीं, दूर ही से सुनाइये।

मिश्र०—अच्छा, तो सुनिये।

चपला—कहिये।

मिश्र०—मैं तुम्हारी भाँति रूठना, ठिनकना, मटकना और नख़रे करना भी खूब अच्छा प्रकार जानता हूँ।

चपला—और क्या जानते हो?

(मिश्रजी रूठने का बहाना करके चुपचाप खड़े रहते हैं)

चपला—अजी! बोलते क्यों नहीं?

(मिश्रजी फिर भी चुपचाप खड़े रहते हैं)

चपला—अजी बतलाइये न।

(मिश्रजी फिर भी चुपचाप हैं)

चपला—(मिश्रजी का कंधा पकड़ कर झकझोरते हुए) अजी क्या मौन व्रत धारण किया है? जो बोलते तक नहीं।

मिश्र०—(बनावटी क्रोध पूर्वक) चलो हटो! मुझसे न बोलो, मुझे न छेड़ो। मुझे व्यर्थ परेशान न करो।

चप०—मुझसे क्यों नहीं बोलना चाहते ?

मिश्र०—मेरी खुशी। मेरा दिल तुमको नहीं चाहता।

चप०—तो किसको चाहता है ? क्या किसी दूसरी को प्यार करने लगे हो ? किसी नार वनिता के प्रेम पाशमें तो नहीं जा फँसे हो ?

चम्पा—बहिन चपला ! तो क्या अब मेंढकों को भी जुकाम होने लग गया ?

चप०—बहिन ! मेरे स्वामी को मेंढक न बनाओ। (मिश्रजी से) हाँ, तो कहिये ! वह कौनसी खुशकिस्मत है, जिसको आपका दिल प्यार करता है। जरा मैं भी तो सुनूं ? पचास वर्ष की है अथवा पचपन की।

चम्पा—जी नहीं, पूर्ण षोडश वर्ष की है।

चपला—साँवली है अथवा गेंहुआ रङ्ग की।

चम्पा—जी नहीं, बिलकुल दूध के समान अमोल कपोल वाली है।

चपला—अच्छा बहिन अब रहने दो। मेरे भोले भाले पति को अधिक दिक न करो।

चम्पा—अच्छा, अब कुछ न कहूँगी, परन्तु इनसे इनके अप्रसन्न होने का कारण तो पूँछलो।

चपला—अजी हाँ, यह तो बतलाइये कि आप मुझसे किस कारण अप्रसन्न होगये हैं ?

मिश्रजी—तुम्हारे होशोहवाश इस समय कहाँ पर खोगये हैं, जो तुमने मेरा इतना बड़ा नुकसान कर डाला।

चपला—अजी ! कौनसा नुकसान कर डाला ?

बन गई है सुन्दर नारी, आई बसन्त ऋतु प्यारी ॥
पुष्प प्रत्येक खिला, एक से एक मिला ।
मरवा, माधवी, निवारी । आई बसन्त० ॥
है गुललाला अति मतवाला, आला और निराला ।
गेंदा, गुलाब, केवड़ा, कुन्द कलगा की छवि है
न्यारी । आई बसन्त ऋतु प्यारी ।

(नाचते तथा गाते हुए प्रस्थान)

(दरबान का प्रवेश)

दरबान-(ताज़ीम बजा कर बा अदब)—

हुजूर ! हाकिम कल्याणगढ़, दरबार में कुछ फरियाद करने की इजाजत चाहता है ।

(दरबान का जाना और कल्याणगढ़ के हाकिम का आना)

हाकिम कल्याण०—हुजूर की दुहाई है ।

सुलतान—क्या मामला है भाई ! तुझ पर ऐसी क्या तबाही है ? जो देता दुहाई तिहाई है ।

हाकिम—बन्दह नवाज ! मुझपर एक बड़ी मुसीबत आई इस लिये आपको फरियाद सुनाई है—

दुःख से भरी हुई है मेरा दास्ताने ग़म ।
सुन करके उसे आपको होगा न रंज कम ॥

सुलतान—जो कुछ भी होवे मामला फौरन बयान कर ।
हम सब सुनेंगे दास्तान तेरी ध्यान धर ॥

हाकिम—हुजूर ! शिवाजी ने बड़ा ऊधम मचाया है । हमारे उ पर जुल्म ढाया है । मेरा राज्य मुझसे छिनाया है ।

सुलतान—कौन शिवाजी ?
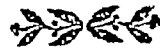
हाकिम—आपके मुलाज़िम सरदार शाहजी का बरखुर्दार शिवाजी।

सुलतान—उसने क्या किया है?

हाकिम—उसने तोरन, रायगढ़ व कौनकन के किलों पर अपना कब्ज़ा कर लिया है, और मेरा कल्याणगढ़ भी मुझसे छीन लिया है। उसकी ताकत दिनों दिन बढ़ती जाती है। दक्खिन की सैकड़ों हिन्दू रैयत रोजाना उसकी फौज में भरती होती जाती है। चारों तरफ उस शेर की दहाड़ है, हम गरीब कमज़ोरों की पुकार है कि उसकी ताक़त की बढ़ती को रोकने का बहुत जल्दी कोई इन्तज़ाम किया जाये। उसके कुसूर का उसे माकूल दण्ड दिया जाये। थप्पड़ का बदला घूँसे से लिया जाये—

वर्ना सब बीजानगर कब्जे में उसके आयगा।
सुलतान दिल फिर आपका मल दस्त अति पछितायगा।
दरख्वास्त मेरी मान कर सेना रवाना कीजिये।
बढ़ने न पाये गनी जब तक मार उसको दीजिये॥

सुलतान—तुम बेफिक्र रहो, हम सब इन्तज़ाम करलेंगे।

हाकिम—हुजूर! इत्तिला देने का जो मेरा फर्ज था, वह मैं अदा कर चुका। अब मैं जाता हूँ।

सुलतान—जाओ।

(हाकिम कल्याण गढ़ का जाना)

सुलतान—(वज़ीर से) वज़ीर साहब! उस छोकड़े शिवाजी की गिरफ्तारी का क्या इन्तज़ाम किया जाय?

वज़ीर—हुजूर! मेरी समझ में तो यह आता है कि

शिवाजी को गिरफ्तार करने के पेश्तर उसके पिदर सरदार शाहजी भोंसला को गिरफ्तार करना बेहतर होगा वह यहीं पर है इसलिये उसकी गिरफ्तारी भी आसानी से होजायगी उसको गिरफ्तार करके उसके इलाक़ों पर कब्ज़ा कर लिया जाय, क्योंकि मैसूर और तन्जोर के कई बड़े बड़े इलाके जो कि इसने जीते थे इसी के कब्ज़े से हैं और सारे पूना पर इसी का कब्ज़ा है। अगर इसको जल्दी गिरफ्तार नहीं किया जायगा तो वह अपने लड़के से मिल जायगा, और फिर शिवाजी की ताक़त और भी ज्यादा बढ़ जायगी। फिर उसकी गिरफ्तारी भी मुश्किल होजायगी।

सुलतान—लेकिन मुझे तो यह नामुमकिन मालूम होता है कि शाहजी हमारे साथ दगा करेगा। मेरा दिल यही कहता है कि वह अपने पिसर का साथ छोड़ देगा, लेकिन हमारा साथ नहीं छोड़ेगा। क्योंकि राजपूत की कौम बड़ी वफ़ादार होतीहै; वह अपने आक़ा के साथ दगा करना नहीं जानती। शाहजी भी अव्वल तो खुद प्रतापी राजपूत घराने का लड़का है, दूसरे वह बड़ा नमकहलाल है। मैंने उसका कई दफा इम्तहान किया है, इस लिये मुझे यक़ीन होता है कि वह हमारे खिलाफ़ साजिश कभी नहीं कर सकता।

वज़ीर—हुज़ूर! यह आपका झूँठा ख्याल है। एक काफ़िर कभी भी अपने मुसलमान आक़ा के साथ वफ़ा नहीं कर सकता। वह मौक़ा पाकर ज़रूर दगा करेगा। आप उसकी मक्कारी से वाक़िफ़ नहीं। अगर आप अपना राज बचाना चाहते हैं तो मेरा कहना मानिये। शाहजी को गिरफ्तारी का हुक्म देदीजिये।

सुल्तान—अच्छा, तुमको उसकी गिरफ्तारी का इख्त्यार है ।

वज़ीर—तो बन्दा भी छल, धोखे और फरेब के शाहजी को गिरफ्तार करने के लिये तैयार है । (जाना)

(पर्दा गिरना)

दृश्य छटवाँ

स्थान—रायगढ़ का एक मार्ग ।

(शिवाजी और दक्षिण के कुछ हिन्दुओं का खड़े हुए दिखाई देना)

शिवाजी-सङ्गठन करो ! मेरे प्यारे भाइयो सङ्गठन करो। हमारी हिन्दू जाति में सङ्गठन का बिल्कुल अभाव है । और हम सङ्गठन के बिना अपने शत्रुओं का सामना कदापि नहीं कर सकते । हम लोगों में सर्वनाश की जड़ विशाविनी फूट ने बुरी तरह अपना डेरा जमाया है । हम समस्त हिन्दुओं को उसने अपना शिकार बनाया है । बुरी तरह अपने चंगुल में फँसाया है । हम लोगों को मिलकर उसके कठिन पाशको तोड़ देना चाहिये । निशाचरी फूट के मस्तक को फोड़ देना चाहिये । ताकि वह पुनः हमारी हिन्दू जाति में प्रवेश करने का दुःसाहस न करे । हम बौद्ध, जैन, सनातन मतावलम्बी, सिक्ख आदि समस्त भाइयों को प्रेम पाश में बद्ध होकर, सम्पूर्ण हिन्दू जाति को सुसङ्गठित होना चाहिये । तभी हम

अपने शत्रुओं को भारत से मार भगाने, और पूर्ण स्वतन्त्रता पाने में सफलता प्राप्त कर सकते हैं तभी हम किसी शक्ति शाली जाति के सम्मुख अड़ सकते हैं। तभी हम युद्ध क्षेत्र में विधर्मियों और विपक्षियों से लड़ सकते हैं और उनको पराजित कर सकते हैं। जब काश्मीर और चितराल से लेकर कुमारी अन्तरीप तक के एवम् अपर ब्रह्मा के पूर्वीय भाग से लेकर बिलोचिस्तान के पश्चिमी भाग तकके समस्त हिन्दू जब पूर्ण रूप से सुसङ्गठित हो जायेंगे उनमें ऊँच नीच, छूताछूत धनी निर्धन, मैले उजले आदि किसी भी प्रकार का भेद भाव न रहेगा, सम्पूर्ण हिन्दुओं में दूध और पानी के समान प्रेम होजायगा। तभी यह राष्ट्र सच्चा महाराष्ट्र कहलायगा और भारतवर्ष ही नहीं, प्रत्युत समस्त संसार को भी विजय करने में अवश्य सफलता पायगा—

सङ्गठित जाति जब होगी सफल सब कार्य्य होवेंगे।
सकल संसार के शासक शिरोमणि आर्य्य होवेंगे॥
कला विज्ञान के आचार्य्य के आचार्य्य होवेंगे।
हमारी आज्ञा अरु सब वचन शिरधार्य्य होवेंगे॥

एक हिन्दू—परन्तु श्रीमान्! यह किस प्रकार जाना जा सकता है कि भारतवर्ष का कौनसा निवासी हिन्दू है और कौनसा अहिन्दू है। क्योंकि हिन्दुस्तानमें मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी, बौद्ध, जैन, सनातनी, सिक्ख, वैष्णव, शैव इत्यादि अनेकानेक मतावलम्बीगण निवास करते हैं।

पारसियों को भारत में आये हुए एक हज़ार वर्ष के लगभग और मुसलमानोंको छः सौ वर्ष से कुछ अधिक होगया, यह लोग भी अपने को हिन्दू कह सकते हैं। विधर्मी और

विपक्षी हमारे हिन्दू भाई सिक्ख, जैन आदि को बहकाते हैं कि तुम हिन्दू नहीं हो। मुसलमान सिक्खों से कहते हैं कि यदि तुम हिन्दू हो तो हम भी हिन्दू हैं, क्योंकि हम तुम्हारे मत के संस्थापक गुरु नानक के जन्मदिन से बहुत पहिले से भारत में रहते हैं। तुम्हारे पास तुम्हारे हिन्दू होने का क्या प्रमाण है? इसलिये मैं पूँछता हूँ क्या हिन्दू शब्द की कोई व्याख्या है? क्या हिन्दू होने की कोई विशेष पहिचान है?

शिवाजी–है। हिन्दुओं के पास हिन्दू होने का अकाट्य प्रमाण है।

दूसरा हिन्दू–कौनसा प्रमाण है?

शिवाजी–"आसिन्धु सिन्धु-पर्यन्तायस्य भारत भूमिका।
पितृ भू पुण्यभूश्चैव सवै हिन्दु-रितिस्मृतः॥"

यही छोटा सा श्लोक हिन्दु शब्द की व्याख्या है। यही हिन्दु होने का अकाट्य प्रमाण है यही हिन्दुओं की पहि-चान है।

तीसरा हिन्दू—श्रीमान्! इसका अर्थ क्या है?

शिवाजी—इसका अर्थ यह है—

पितृ पृथिवी पुण्य पृथिवी जिनकी भारतवर्ष है।
उनहीं जनों को प्राप्त केवल हिन्दु का उत्कर्ष है॥

अर्थात् हिन्दुस्तान जिनकी पितृभूमि और पुण्य भूमि यानी धर्म्मभूमि अर्थात् जिस भूमि में उनके धर्म्म संस्थापक उत्पन्न हुए, वह भूमि है, केवल वे ही हिन्दू हैं। इसका भी खुलासा यह है कि जिनके धर्म्म संस्थापक यानी धर्मदाता अर्थात् धर्म्म को चलाने वाले भारतवर्ष में उत्पन्न हुए हैं, और जिनके धर्म्म अथवा मतका प्रादुर्भाव अर्थात् उदय भारत

में हिन्दुओं द्वारा हुआ है अर्थात् जिनके धर्म संस्थापकों ने हिन्दू पिता के वीर्य और हिन्दू माता के गर्भ से जन्म लिया है वेही हिन्दू हैं। भारतवर्ष में जितने भी धर्म अथवा मतोंका आविर्भाव हुआ है उन सबके संस्थापक यानी चलाने वाले हिन्दू ही थे। जैनियोंके ऋषभदेवसे लेकर महावीर तक सर्व तीर्थंकर हिन्दू पिता के वीर्य और हिन्दू माताके गर्भ से भारत में ही उत्पन्न हुए। इसी प्रकार बौद्ध धर्मके संस्थापक महात्मा गौतम बुद्ध कपिलवस्तु के क्षत्रिय राजा शुद्धोधन के पुत्र थे। उनके पिता शाक्य जातिके क्षत्रिय थे इसकारण वे शाक्यमुनि भी कहलाते हैं। और इसी भाँति सिक्ख मत के संस्थापक गुरु नानक हिन्दू थे और हिन्दुस्तान में ही वे उत्पन्न हुए थे। हिन्दू धर्म के अन्य सब मतों के संस्थापक भी हिन्दू माँ के गर्भ से हिन्दुस्थान में ही उत्पन्न हुए है। हिन्दुस्थान में स्थापन किये गये किसी भी धर्म का अनुयायी चाहे वह संसार के किसी भी देश में रहता हो, चाहे वह कौनसी भी भाषा बोलता हो, चाहे वह कैसे भी रङ्ग रूप का हो, चाहे वह कैसा भी खाना खाता हो, हिन्दू ही है। चीन, जापान, मंगोलिया आदि देशोंके रहनेवाले जोकि बौद्ध अथवा भारतवर्ष में स्थापन किये गये किसी अन्य मतको मानते हैं और उसके अनुयायी हैं, वे सब हिन्दू ही हैं। इसके विपरीत मुसलमानों की पुण्यभूमि अरब है अर्थात् इसलाम धर्म के संस्थापक मुहम्मद पैगम्बर अरब में पैदा हुए थे इस कारण वे हिन्दू नहीं कहला सकते। इसी प्रकार ईसाइयोंकी पुण्यभूमि यानी धर्मभूमि सीरिया है अतएव वे भी हिन्दू नहीं हैं। अब, कौन हिन्दू है और कौन हिन्दू नहीं है यह बात बिलकुल स्पष्ट

होजाती है। केवल भारत के ही नहीं बल्कि समस्त संसार के हिन्दुओं में दूध और पानी के समान हार्दिक प्रेम और सच्चा स्नेह होना चाहिये, तभी हम जगत-शिरोमणि सच्चे हिन्दू कहला सकते हैं।

हिन्दुओं में जल अरु पय के सम, जब प्यार प्रेम होजायगा।
तो निश्चय यह आरत भारत, सर्वोच्च शिखर को पायगा॥
दुख दारिद्र होंगे दूर सभी, विपदायें हों काफूर सभी।
सुख, सम्पत्ति, बल, विद्यासे हों, हिन्दुओं के घर भरपूर सभी॥

चौथा हिन्दू—श्रीमान्! दूध और पानी में कैसा प्रेम होता है।

शिवाजी—ध्यान देकर सुनो! दूध और पानी में इस प्रकार का प्रेम होता है। ॐ गाना ॐ

अति दीन मलीन विचारा जल, जब शरण क्षीर की आताहै।
नहि-दुग्ध कहे हट दूर परे, भाई को गले लगाता है॥
अपना रङ्ग रूप और गुण पय, जल को सारा दे देता है।
जिस मूल्यमें वह खुद बिकताहै, उस मूल्यही उसे बिकाताहै॥
हलवाई के जब हाथों ने, भट्टी पर चढ़ा दिये दोनों।
अरु अग्नि धधकने लगी खूब, तब पानी वचन सुनाता है॥
"प्यारे भ्राता आश्रयदाता, मत चिन्ता मन में तनिक करो।
मेरे होते देखूं पावक तुमको किस भाँति जलाता है॥"
सारा जल जब जल जाताहै, तब पय अतिशय दुखियाताहै।
वह बन्धु वियोग न सह सकता, मनमें भारी दुख पाता है॥
कहता है सखे! कहाँ जाता? क्यों मुझको छोड़े जाताहै?।
मैं भी आता हूँ यह कह कर, वह अपने को उफनाता है॥

या तो मैं ही जल जाऊँगा, या पावक को ही बुझाऊँगा।
यह कह कर गिरता भट्टी में, अपने को भस्म बनाता है॥
हलवाई भी उसके मन की, सारी बातों को ताड़ गया।
फिर फौरन थोड़ा जल लेकर, उसको दूध में मिलाता है॥
पानी को पुनि पाकर के पय, अतिशय प्रसन्न हो जाता है।
बिछुड़ा भाई मिल जाने का, फिर अतुलित हर्ष मनाता है॥
यदि हम में भी हो प्रेम यही, तो बहुर वही दिन आवेंगे।
फिर हम हिन्दू भारतवासी संसार मुकुट कहलावेंगे"॥

अच्छा, तुम सब लोग जाओ, और सङ्गठन के कार्य्य में लग जाओ। ऐसा सङ्गठन होना चाहिये कि देशके हित के हेतु हिन्दुओं का बच्चा २ एक होजाय। यदि बुरी इच्छा से हिन्दुओं की ओर कोई आँख उठाय तो उसकी आँख फोड़दी जाय। और अगर कोई अँगुली उठाये तो उसका पूर्ण हाथ मरोड़ दिया जावे।

सब हिन्दू—बहुत अच्छा, महाराज! ऐसा ही होगा।

(सब का जाना, पर्दा गिरना)

सातवाँ दृश्य

स्थान—बीजापुर, शाहजी का मकान।

(शाहजी का कुरसी पर बैठे हुए दिखाई देना)

शाहजी—(स्वगत प्रसन्न होकर) अहा! मुझको समा-

चार मिला है कि मेरा प्राण प्रिय पुत्र, मेरे कमल रूपी वंश को सूर्य के समान प्रफुल्लित करने वाला, मेरा दुलारा आँखों का तारा शिवा आज बीजापुर आरहा है। आज मैं अपने सुपुत्र शिवा का पूर्ण चन्द्र के समान मुख मण्डल देख कर सिन्धु के सदृश प्रसन्न होऊंगा। सहसा मेरे अन्तःकरण में प्रसन्नता की तरङ्ग उठ रही हैं—

हर्ष ही अब हो रहा मेरे हृदय का हार है।
इस समय अतुलित हृदय में हर्ष पारावार है॥
सुत के स्नेह सिन्धु का मिलता न मुझको पार है।
प्रेम पारावार में उठने ही वाला ज्वार है॥

(ड्योढ़ीवान का प्रवेश)

ड्योढ़ीवान—(आकर) छोटे सरकार पधारे हैं।

शाहजी—(प्रसन्न होकर) अहा ! मेरा प्राण प्यारा, नेत्रों का तारा, दुलारा, मरहठा जाति का उजियाला शिवा आगया।

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—(आकर) पिताजी प्रणाम।

शाहजी—पुत्र ! आयुष्मान हो। तुम्हारा सर्वदा कल्याण हो। कहो कहाँ से आरहे हो ?

शिवाजी—रायगढ़ से आपके दर्शनों की लालसा से चला आ रहा हूँ।

शाहजी—आजकल तुम्हारा कैसा कार्य चल रहा है ?

शिवाजी—हिन्दू सङ्गठन का प्रचार किया जा रहा है। आरत भारतकी डूबती हुई नौकाके उद्धार का विचार किया

जा रहा है। आशा है कि मुझको बीजापुर सुल्तान के साथ शीघ्र युद्ध छेड़ देना पड़ेगा। आप युद्ध में किसका साथ देंगे? यही जानने के लिये आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ। आपके सम्मुख एक ओर देश-भक्ति, जाति-भक्ति और धर्म्म भक्ति रक्खी हुई है, और दूसरी ओर राजभक्ति एवम् स्वामि भक्ति उपस्थित है। मैं जानना चाहता हूँ कि आप इनमें से किस पक्ष का साथ देना पसन्द करते हैं।

शाहजी—(स्वगत) सचमुच मैं इस समय एक बड़ी कठिन समस्या में हूँ। मैं इस समय एक तोलने वाले वणिक के समान हूँ। मेरी तराजू के एक पलड़े में देश भक्ति, जाति भक्ति, धर्म्मभक्ति और पुत्र स्नेह रखा हुआ है और दूसरे में राजभक्ति एवम् स्वामिभक्ति। दोनों ही पलड़ों का वजन समान है। मैं बड़े असमञ्जस में हूँ कि किसको ग्रहण करना चाहिये और किसका परित्याग। हाय! प्यारी जाति भक्ति और देशभक्ति? मैं तुम्हारा साथ छोड़ने के लिये विवश हूँ। मैं दूसरे का सेवक हूँ। स्वतन्त्र नहीं परतन्त्र हूँ, मुझे स्वामिभक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी धर्म का पालन करना उचित नहीं। इस लिये सुत स्नेह तू भी मुझसे दूर हो और आ! राजपूतों की प्यारी स्वामि भक्ति मैं तुझको अपने हृदय से लगाऊँ। (शिवाजी से) पुत्र मैं विवश हूँ। मैंने सुलतान का नमक खाया है, इस कारण उसके विरुद्ध तलवार उठा कर मैं नमक हराम नहीं कहलाना चाहता हूँ। मैं युद्ध में अपने स्वामी सुलतान का ही साथ दूंगा। मैं आशीर्वाद देता हूँ कि जाति सेवा और देश सेवा के हित के लिये ही तुम्हारा तन, मन, धन और प्राण बलिदान हो।

शिवाजी—तो फिर पिता पुत्र में युद्ध होना ही निश्चय रहा।

शाह०—धर्म और कर्त्तव्य के ऊपर पिता पुत्र में युद्ध होना आर्य्यों के इतिहास मे कोई नई बात नहीं है। तुमको अपने कर्त्तव्य का पालन करना और मुझको अपने कर्त्तव्य का पालन करना उचित है।

शिवाजी—पिताजी! मै जाता हूँ। प्रणाम!

शाह०—जाओ बेटा! ईश्वर तुम्हे आयुष्मान करे। और तुम्हारे शुभ विचारों में तुमको पूर्ण सफलता प्रदान करे।

(शिवाजी का जाना)

(ड्योढ़ीवान का प्रवेश)

ड्योढ़ी०—श्रीमान्! सरदार देवराव पधारे हैं।

शाह०—आने दो।

(देवराव का प्रवेश)

शाह०—आइये देवराव जी! कहो प्रसन्न हो।

देव०—आपके चरणों की कृपा से आनन्द है।

शाह०—बैठिये देवराव!

(देवराव का कुरसी पर बैठना)

देवराव-महाराज! आपकी यह तलवार मुझको अत्यन्त प्रिय और परमोत्तम लगती है। इसकी मूठ और म्यान मेरे मन अत्यन्त भा गई है। इसकी कारीगरी मेरे दिल में समा गई है। ऐसी एक तलवार मैं भी बनवाना चाहता हूँ। इसकी धार कैसी है राजा! ज़रा देखने को देना।

शाहजी-(कमर से तलवार खोलकर देते हुए) लीजिये।

देवराव—मेरी दृष्टि में यह तलवार सर्वोत्तम है। यह समय भी अत्यन्त उत्तम है।

शाह०—समय उत्तम होने का क्या तात्पर्य है देवराव ?

(अकस्मात् बीजापुर के वज़ीर का यवन सैनिकों के साथ प्रवेश)

वज़ीर०-(प्रवेश करके) इसका मतलब यह है कि तुमको गिरफ्तार करने का यही बढ़िया वक्त है ।

(देवराव का कुरसी से चुपचाप उठकर नङ्गी तलवार लिये हुए मुसलमान सैनिकों के निकट जा खड़े होना)

शाहजी—(कुरसी से खड़े होकर) तुम्हारे कहनेका क्या मतलब है वज़ीर साहब ?

वज़ीर०—यही कि मैं तुमको गिरफ्तार करने आया हूँ।

शाह०—मुझे गिरफ्तार करने का आपको क्या अधिकार है ?

वज़ीर०—मेरे पास यह देखो ! (वारण्ट दिखाते हुए) सुलतान के दस्तखत किया हुआ तुम्हारी गिरफ्तारी का वारण्ट मौजूद है । और यह शाही फौज तुमको गिरफ्तार करने के लिये तैयार है ।

शाह०—मुझको गिरफ्तार करने का कारण ?

वज़ीर-कारण यही है कि तुम अपने बागी लड़के शिवाजी से मिले हुए हो । आज वह तुम्हारे घर पर आया था, उसके साथ मिलकर बगावत करना चाहते हो । इसी कसूर से गिरफ्तार किये जाते हो ।

शाह०—यह सब तुम्हारा षड्यन्त्र है । (देवराव से) देवराव ! मेरी तलवार लाओ, ताकि मैं इनको गिरफ्तार करने का सारा मज़ा चखादूँ—

शाह अब तो हर तरह से युद्ध को तैयार है।
रक्त पीने के लिये तत्पर मेरी तलवार है॥
देव०—आपकी तलवार का मिलना मगर दुश्वार है।
शाह०—मिल गया क्या तू भी इनमें कैसा अत्याचार है॥

वज़ीर—(सिपाहियों से) बहादुरो ! क्या देखते हो ? गिरफ्तार करलो।

(सिपाहियों का गिरफ्तार करने के लिये आगे बढ़ना, शाहजी का दो तीन सिपाहियों को उठाकर पृथ्वी पर पटक देना, अन्त में गिरफ्तार होजाना, सब का जाना)

"ड्राप सीन"
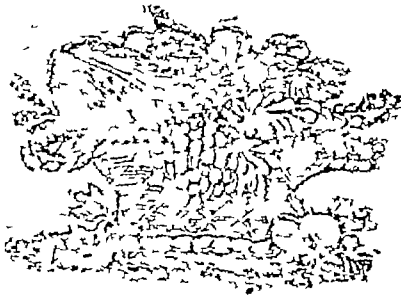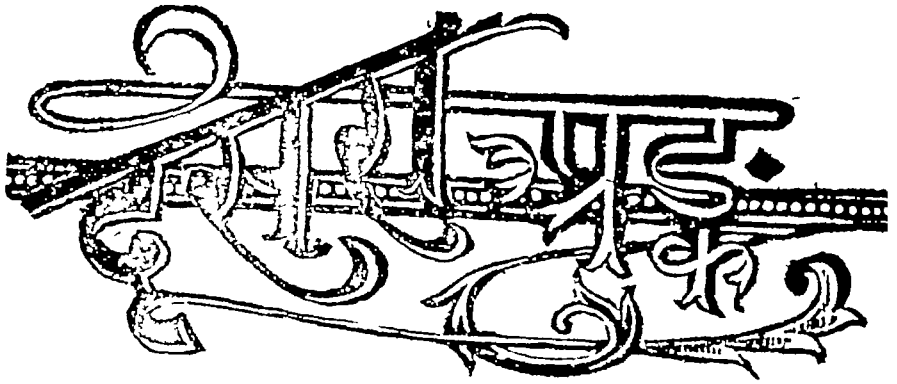
प्रथम दृश्य

स्थान—बीजापुर का दरबार।

(सबका यथा स्थान दृष्टि आना, गाने वालियों का नाचते हुए प्रवेश)

नाचने वाली—(नाचते हुए) * गाना *

सुलतान की बढ़ती शान रहे। रहमान सदा रहमान रहे ॥
शाहो बुलन्द फरमान रहे। खिलता मन का उद्यान रहे ॥
बाक न कोई अरमान रहे। अल्ला का सब पर ध्यान रहे ॥
सुलतान की बढ़ती शान रहे। दरबार सदा आबाद रहे ॥
हरएक का दिलभी (शाद) रहे, खा लकको सदा इमदाद रहे ॥
हरएक शख्श आज़ाद रहे। औ खुदा की सबको याद रहे ॥
दरबार सदा आबाद रहे। (प्रस्थान)

सुलतान—(कोतवाल से) कोतवाल साहब! शाहजी को दरबार में हाज़िर करो।

कोतवाल—(खड़े होकर) बहुत अच्छा जहाँपनाह।

(जाना)

सुलतान—(वज़ीर से) वज़ीर साहब! आपने बहु

अच्छा काम किया जो मुझको शाहजी की तरफ़ से चेता दिया। मैं उसको ऐसा नमक हराम नहीं समझता था। मैं उसके ऊपर बहुत ज्यादा विश्वास करता था।

वज़ीर—जहाँपनाह! यह आपकी गल्ती थी, जो आप एक काफ़िर से वफ़ा की उम्मेद रखते थे। मेरे ख़याल से किसी भी मुसल्मान के साथ कोई काफ़िर कभी वफ़ा नहीं कर सकता। जब करेगा दगा करेगा।

(शाहजी का हथकड़ी पहने हुए सशस्त्र सिपाहियों से घिरे हुए प्रवेश)

सुलतान—कहो शाहजी! दग़ाबाज़ी करने का कैसा मज़ा मिलता है।

शाहजी—क्या कहते हो सुलतान! दग़ाबाज मैं हूँ या आप? शाहजी कभी दग़ाबाज़ नहीं हो सकता।

सुलतान—क्या तुमने नमकहरामी नहीं की?

शाहजी०—मुझको नमक हरामी का दोष लगाने वाला महा पापी है।

सुलतान—क्या तुम्हारे घर शिवाजी नहीं आया था?

शाहजी—आया था। क्या पिता के घर पुत्र के आने की कोई रोक है?

सुलतान—क्या तुम उसके साथ मिलना नहीं चाहते थे। क्या उसको सहायता देने का तुम्हारा विचार नहीं था?

शाहजी—नहीं, कभी नहीं।

सुलतान—अच्छा जो कुछ भी हो, इससे हमें कुछ भी मतलब नहीं। अगर तुम चाहते हो कि मैं छोड़ दिया जाऊँ तो अपने लड़के शिवाजी को एक ऐसे मज़मून का ख़त लिखो

कि जिससे वह खुद दरबार में हाज़िर होकर हमसे अपने कुसूर की माफ़ी माँगे।

शाहजी—परन्तु मैं अपने छुटकारे के हेतु अपने देवता तुल्य पुत्र को तुम्हारे जैसे अन्यायियों के चंगुल में कदापि फँसाना नहीं चाहता।

सुलतान—अगर तुम खत नहीं लिखोगे तो हम दूसरी तरकीब से काम लेंगे।

शाहजी—चिन्ता नहीं, तुमसे जो कुछ किया जाय वह करो मैं इस विषय का पत्र कदापि नहीं लिख सकता।

सुलतान—(कोतवाल से) कोतवाल! जाओ, इसकी बीबी को पकड़ लाओ और मुसलमानी बनालो।

(शिवाजी का नङ्गी तलवार लिये हुए प्रवेश)

शिवा०—ठहरो दुष्टो! तुमको मेरे लिये कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं, मैं तुम लोगों को दण्ड देने के लिये स्वयं उपस्थित हूँ।

सुल०—(सिपाहियों से) बहादुरो! इस काफिर लड़के को गिरफ्तार करो। खबरदार! भागने न पावै।

शिवा०—सुलतान! मुझे सिपाहियों द्वारा बन्दी बनाने की चेष्टा न करो। यदि वीरता का कुछ दावा रखते हो तो तलवार हाथ में पकड़ो और सिंहासन से नीचे उतर कर आओ अपनी सुलतानी ताक़त बतलाओ।

सुल०—सिपहसालार! गिरफ्तार करो। इस शैतान काफ़िर का सिर धड़ से जुदा करदो।

इसलाम की कुव्वत इसे, सब मिल के बतादो।
इस कुफ़्र के लड़के का सिर तुम धड़से उड़ादो॥

शैतान के अभिमान को, तुम मार भगादो ।
करने का बगावत का मज़ा, फौरनही चखादो ॥

शिवा०—इन लोगों में क्या बल है, जो ये मेरा सामना करें ।

दुष्टों में शक्ति क्या है, जो ये मुझसे लड़ेंगे ।
आने के साथ भूमि पर मर करके गिरेंगे ॥
है सबको क़सम खुदा की मिल वार कीजिये ।
जो दिल में तमन्ना हो,वह निकाल लीजिये ॥
प्रत्येक को संग्राम में, मैं खेल खिलादूँ ।
दरबार की इस शान को मिट्टी में मिलादूँ ॥

सिपहसालार-(तलवार निकालकर) चुप बद्कार ! अब ज्यादा ज़बान न खोल, अपनी हैसियत के मुताबिक बोल ।

काफ़िर ज़बाँ को रोक कर फौरन् लगाम दे ।
शैतान अपनी मौत को न खुद पयाम दे ॥

(सिपाहियों से) बहादुरो ! क्या देखते हो ? मेरे साथ आगे बढ़ो, और इस काफ़िर के सिर को उड़ादो ।

(सिपहसालार और सब सिपाही तलवार खींचकर शिवाजी पर एक साथ वार करते हैं, शिवाजी अत्यन्त वीरता के साथ सबका सामना करते, और कुछ समय के पश्चात् सबको हत अथवा आहत करके धराशायी करदेते हैं)

शिवाजी-(सबको धराशायी करने पश्चात्) सुलतान ! तुम्हारे ये मनुष्य तो मुझको गिरफ्तार करने में असमर्थ रहे । अब सेना बजवाकर मेरी गिरफ्तारी के लिये बुलवाइये । या बाक़ी बचे हुए दरबारियों के साथ स्वयं मेरा सामना कीजिये ।

सुलतान-(दरबारियों से) बहादुरो ! क्या देखते हो ?

अपनी २ तलवार निकाल कर दुश्मन का सामना करो।
(सब दरबारी तलवार निकाल कर सामना करते हैं, परन्तु शिवाजी की पिस्तौल या तलवार का लक्ष्य बनकर शीघ्रही कुछ तो हत या आहत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं, और कोतवाल, वज़ीर, देवराव आदि कुछ भाग जाते हैं, कोतवाल, वज़ीर को भागते हुए देखकर सुलतान भी सिंहासन से उठ कर भाग जाता है)

शिवाजी—(सुलतान को भागते हुए देखकर) सुलतान! हैं! आप यह क्या करते हैं? इस्लामका नाम क्यों डुबोतेहैं। मुझको गिरफ्तार किये बिना क्यों भागे जाते हैं? लौटिये! आपको खुदा की कसम है, लौटिये और मेरे साथ युद्ध करके मुझे गिरफ्तार कीजिये। (कुछ देर प्रतीक्षा करके) नहीं लौटा कायर। ऐसे कायर पुरुष सुलतानों को धिक्कार है, करोड़ बार फटकार है। (शाहजी से) लाइये पिताजी! मैं आपकी हथकड़ी काट दूं।

शाहजी—पुत्र! काटने की आवश्यकता नहीं। मैं इन्हें स्वयं तोड़ सकता हूं। (हथकड़ी स्वयं तोड़ देता है)

शिवा०—अच्छा! आइये।

(दोनों जाते हैं, पर्दा गिरता है)

दूसरा दृश्य

स्थान—छावनी।

(शिवाजी का बैठे हुए दृष्टि आना)

शिवाजी—(स्वगत) अफ़ज़लखाँ ने सन्धि का प्रस्ताव पेश किया है और आज वह मुझसे मिलने आयेगा। परन्तु
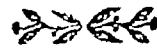
इसने भेट के समय सेना दूर हटा देने और निशस्त्र रहने के लिये मुझसे प्रार्थना क्यों की है ? इसमें कोई रहस्य तो नहीं है। कहीं अफ़ज़लखाँ विश्वासघात तो नहीं करना चाहता। ख़ैर! इसकी भी कुछ चिन्ता नहीं, मैं सब प्रबन्ध किये लेता हूँ। (पहिरेदार से) पहिरेदार!

पहिरेदार—(प्रवेश करके) महाराज! क्या आज्ञा है।

शिवाजी—सेनापति को बुला लाओ।

पहरे०—जो आज्ञा। (जाना)

(मरहठा सेनापति का प्रवेश)

सेना०—(प्रणाम करके) महाराज! दास को किस हेतु स्मरण किया है।

शिवाजी—सेनापतिजी! यवन सेनापति अफ़ज़लखाँ मुझसे बिल्कुल एकान्त में भेट करना चाहता है। इस लिये तुम यहाँ से अपनी समस्त सेना को हटा कर कुछ दूर पर छिपाकर युद्ध के लिये तैयार रक्खो और यदि अफ़ज़लखाँ विश्वासघात करे तो बिगुल का शब्द सुनते ही बीजापुर की सेना पर टूट पड़ना।

सेनापति—जो आज्ञा। (जाना)

शिवाजी—(स्वगत) मुझको भी अपने पास गुप्तरूप से कोई शस्त्र अवश्य रखना चाहिये। केवल बाघनख ही मेरी रक्षा के लिये पर्याप्त होगा।

(पहरेदार का प्रवेश)

पहरे०—हुजूर! यवन सेनापति अफ़ज़लखाँ पधारे हैं।

शिवाजी—जाओ, आदर पूर्वक ले आओ।

(पहरेदार का जाना, और अफ़ज़लखाँ को लेकर आना)

शिवाजी—आइये खाँ साहब! तशरीफ़ रखिये।

अफ़ज़ल—पहले अपने इस पहरेदार को हटा दीजिये ताकि यह हमारी बात न सुन सके।

शिवाजी—(पहरेदार से) तुम यहाँ से इतनी दूर चले जाओ कि हमारी बातों को बिलकुल न सुन सको।

(पहरेदार का जाना)

शिवा०—कहिये खाँसाहब! आप किन किन शर्तों पर सन्धि करना चाहते हो?

अफ़०—तुम अपने जीते हुए किलों को सुलतान बीजापुर को वापिस लौटा दो, और अपने नये तैयार किये पहाड़ी किले प्रतापगढ़ को हमारे अधिकार में दे दो। इसके बदले बीजापुर दरबार में तुमको एक ऊँचा ओहदा मिलेगा और एक बड़ी जागीर भी दी जायगी।

शिवा०—परन्तु मुझको ये शर्तें स्वीकार नहीं। मैं सन्धि करने के लिये तैयार नहीं।

अफ़०—तुमको ये अलफ़ाज़ कहने का इख्त्यार नहीं। (तलवार खींचकर) क्या हमारी तलवारकी देखी धार नहीं।

काफ़िर-नहीं है कुफ़्र क्या? इस्लाम की तलवार से।
मैं उड़ादूंगा तेरा सिर इसकी पैनी धार से॥
सँभलजा, हुशियार हो! तलवार का अब वार है।
खून पीने के लिये काफ़िर का ये तैयार है॥

(शिवाजी पर वार करता है, शिवाजी पैंतरा बदल कर उसका वार बचा देते हैं, और फिर सिंह के समान कूद कर उसके पेट में अपना बाघनख घुसेड़ देते हैं, अफ़ज़लखाँ पृथ्वी पर गिर कर मर जाता है)
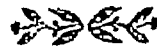
शिवा०—(हत अफ़ज़लखाँ को देखकर) मर गया ! दुष्ट विश्वासघाती यमलोक गमन कर गया। अब मुझको बिगुल बजाना चाहिये जिससे हमारी सेना बीजापुर की सेना पर टूट पड़े और यवनों को सदा के लिये समरक्षेत्र में सुलादे या मार कर भगादे।

(बिगुल बजाना)

(नेपथ्य में सिपाहियों के भागने का शब्द सुनाई देना. पर्दा गिरना)
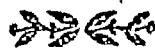
तीसरा दृश्य

स्थान—पूना, शायस्ताखाँ का मकान।

(शायस्ताखाँ का कुरसी पर बैठे हुए कुछ चिन्तित दृष्टि आना)

शाय०—(स्वगत) मुझको यहाँ पर आये करीब ८ महीने गुज़र गये, लेकिन इतने दिनों में लगातार बड़ी कोशिश करने पर भी मैं शिवाजी को गिरफ्तार नहीं कर सका। बादशाह औरङ्गजेब से मैं वायदा कर आया था कि छः माह के अन्दर शिवाजी को गिरफ्तार करके तुम्हारे सामने पेश करदूँगा, लेकिन मैं अब तक कामयाब नहीं होसका। जो सिपह उसकी गिरफ्तारी के लिये भेजी जाती है. वह रोजाना मारी जाती है क्या किया जाय ? कोई तरकीब भी काम नहीं आती है

अक्ल दङ्ग है, चेहरा बदरङ्ग है, होशोहवास काफूर हैं, खुश किस्मती के दिन दूर हैं। उस पहाड़ी चूहे शिवाजी ने तो मेरा नाक मे दम कर दिया। शैतान का बच्चा बड़ा चालाक फुर्तीला और बहादुर है। लाख कोशिशें करने पर भी हाथ नहीं आता है साफ निकल जाता है। हमारी सैकड़ों फौज रोज मारी जाती है, लेकिन उसको कब्जे में नहीं कर पाती है। अगर उसको गिरफ्तार नहीं कर सका तो औरङ्गजेब को कैसे मुँह दिखाऊँगा।—

या खुदा मैं क्या करूँ? कुछ समझ में आता नहीं।
एक काफिर पर फ़तह अल्लाह मैं पाता नहीं॥
आन कर इस वक्त में रहमान तू इमदाद कर।
दुश्मन की ताक़त को मेरे मौला फना बरबाद कर॥
कैद करवादे गनी को मेरे दिल को शाद कर।

शिवा०—(प्रवेश करके)

अपने बचने की खुदा से खान अब फरियाद कर।
आगया अब काल है परवर को अपने याद कर॥

शायस्ता०-(आश्चर्यान्वित और भयभीत होकर) हैं! कौन? शिवाजी? (खिड़की की राह कूद कर भाग जाना)

(शिवाजी के साथियों का शाइस्ताखाँ के
आदमियों को पकड़ कर
पीटते हुए लाना)

शिवाजी के साथी-(दुश्मनों को पीटते हुए चिल्लाकर) क्या ऐसी ही रखवाली करते हो? (सिर पीट कर) क्या ऐसी ही रखवाली करते हो?

सब मुसलमान-हुजूर! हमे माफ़ करो। हमको न मारो

हमारे ऊपर महरबानी करके हमें छोड़ दो । महाराज ! शिवाजी की दुहाई है ।

शिवाजी—मेरे वीरो ! इनको व्यर्थ तङ्ग न करो । सच्चे वीर हाथ जोड़ते हुए और क्षमा की प्रार्थना करते हुओं को कभी नहीं मारते । इसलिये मेरी आज्ञा मान सबको छोड़दो ।

(शिवाजी के साथियों का मुसलमानों को छोड़ देना, सब मुसलमानों का जाना, पर्दा गिरना)

दृश्य चौथा

स्थान—मिश्रजी का मकान ।
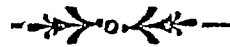
(चपला का प्रवेश)

चपला—चार आने के मोजे बिगड़ जाने के कारण कंजूसों के सरदार, यानी मेरे भरतार मिश्रजी मुझसे इतने अप्रसन्न होगये हैं कि बात तक नहीं करते । उनकी अप्रसन्नता का क्या कोई ठिकाना है ? उनके रूठने की क्या कोई सामा है ? वे अपने को बड़ा बुद्धिमान समझते हैं जो बात बात में तिनके हो जाते हैं । परन्तु असल में जैसे वे मूर्ख हैं वह मैही जानती हूँ । उनके समान कृपण एवम् मूर्ख मेरी दृष्टि मे कोई दूसरा नहीं आता । वे बड़े कृपण और निपुण बनतेहैं, परन्तु मैं उनकी सारी कृपणता और निपुणता एक दिन में निकाल दूंगी । चालाकी में वे मुझसे जीत नहीं सकते । वे क्याहै ? स्त्रियोंसे देवताओं तक ने हार मानी है, फिर पुरुषकी क्या गिनती है ? "त्रिया चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं, देवो न जानाति कुतो मनुष्यः"

यह श्लोक बिलकुल सत्य है। अब मेरे स्वामी मिश्रजी आते ही होंगे। मैं भी अपना त्रियाजाल फैलाती हूँ, और अपने पति को खूब छकाती हूँ। इनका सारा ऐंठना और तिनकना भुलाती हूँ। अहा! वे आही पहुँचे। साक्षात् रौद्रावतार और क्रोध की मूर्ति बने हुए आ रहे हैं। अब मुझको भी इस पलङ्ग पर लेट जाना चाहिये। (पलङ्ग पर दर्द का बहाना कर के लेटती है) हाय मरी! असह्य वेदना! महान् पीड़ा! अत्यधिक दर्द! ओह! उफ! सहन नहीं होता। अरे मरी!

(मिश्रजी का प्रवेश)

मिश्रजी—अरे आजतो घरमें कुछ अनोखा रङ्ग दृष्टि आताहै आज के ढङ्ग को देखकर तो मेरा दिमाग चकराता है। अब तो मेरा सब क्रोध काफूर है। अप्रसन्नता क्या अप्रसन्नता का नाम भी मुझसे कोसों दूर है। घर में आज त्रिया चरित्र का जाल भरपूर है। (चपला से) और भई! यदि मोड़े पहिनने ही हैं तो खुशी से पहिनो। यह बुरी तरह हाय! हाय! क्यों मचाई है। इससे तो मेरी तबियत अत्यन्त घबड़ाई है।

चपला—(बनावटी क्रोध से) अजी बस रहने दो। चलो हटो, मुझे सूरत क्यों दिखाई है! मेरी तो जान के ऊपर नौबत आई है, और तुमको दिल्लगी सुहाई है—

बला से कोई मरजाय तुम्हें परवाह ही क्या है।
तुम्हारे जैसे कंजूसों को मेरी चाह ही क्या है॥

मिश्रजी—हैं! तो क्या तुम सचमुच पीड़िता हो!

चपला—(कराहते हुये) तो क्या आपको अभी तक मज़ाक ही सूझ रहा है! हाय! उफ! मरी! मुझे बचाओ! मुझे बचाओ! कोई मेरी छाती पै चढ़ा हुआ है, कोई मेरी गर्दन

को दबाये देता है, कोई मेरे प्राणों को खींच रहा है।

मिश्रजी-(चपला को निकट से ध्यान पूर्वक देख कर) ओह! इसके ऊपर तो किसी भूत, प्रेत, जिन्द (जिन्न) मसान अथवा चुड़ैल का फेरा मालूम होता है। अच्छा ठहरो! मैं अभी मियाँजी को बुला कर लाता हूँ। इनकी लम्बी दाढ़ी को देखकर बड़े से बड़ा भूत और शक्तिशाली से शक्तिशाली जिन्न भी शिर पर पैर रखकर भागजाता है।

(जाना)

(मिश्रजी का मियाँजी पन्नूखाँ और अपने कुछ पड़ोसियों को साथ लेकर आना)

मिश्रजी-रच्चे भूत! अब तो सियानों और जादूगरों के सरदार, मियाँ आबदार, उर्फ जुल्फकार आगये। अब तेरा ठहरना है दुश्वार, शीघ्र यहाँ से भाग मक्कार।

मियाँजी-(मन्त्र पढ़कर फूंक देने के बाद) भाग शैतान! भाग मक्कार! भाग बदकार! वर्ना फूंक से भस्म करदूगा।

भागजा बदकार तू क्यों कर रहा है देरदार।
जानता पाजी नहीं है, नाम मेरा जुल्फकार॥
शैतान मेरी फूंक से फौरन् फना होजायगा।
अपनी प्यारी जान को लहमे में तू खो जायगा॥

चपला-(दाँत किट किटाकर) दुष्ट! दुराचारी नराधम तुझको मेरे घर मे आने का क्या अधिकार है। पापात्मा, पापी तू साक्षात् पाखण्डका अवतार है। जुल्फकार! तू बड़ा निर्लज्ज और बदकार है, अनाचारी! यह कैसा अत्याचार है कि तू मेरे ही घर में आकर मुझसे निकलने और भागने के

लिये कहता है। मलेच्छ क्या जानता नहीं कि यह मेरे पति का घर है। मैं अपने स्वामी के दर्शन करने और अपनी सौत को लेने आई हूँ। अगर अपनी जान बचाना चाहता है तो बहुत शीघ्र भाग जा नहीं तो कच्चा चबा जाऊँगी।

मैं हूँ वन भूतन सच्ची जो कच्चा सबको खाती है।
तेरे जैसे सियारों की सदा हड्डी चबाती है॥
भाग जा दुष्ट यहाँ से शीघ्र तेरी मौत आती है।
हटा दे जो मुझे यहाँ से सुलेमाँ को न लाती है॥

मियाँ०—ले अभी तुझको भस्म किये देता हूँ। (जेब से उर्दू निकाल कर मन्त्र पढ़ता है) बिस्मिल्ला रहमान रहीम भगा भूत को जल्दी करीम। सुलेमान को आन। हटा जल्द शैतान। फका फक भू भू फू। भगा भू भू भू। थका थक थू थू थू (चपला के निकट जाते हुए) थू, थू, थू, थू। भाग, नहीं तो अभी ज़मींदोज़ किये देता हूँ।

चपला—(खड़ी होकर मियाँजी की गर्दन पकड़कर) नचो, नच ठुमक ठुमक मन्नू। नचो, नच ठुमक ठुमक मन्नू।

मन्नूखाँ—अरे! इसने तो मियाँजी की गर्दन पकड़ली।

मियाँजी—अरे! हमको इस चुड़ैल से छुड़ाओ।

मन्नू—अरे! हमको इसके मर्दाने पंजों से बचाओ।

चपला—कसम खाओ कि हम यहाँ से भाग जायँगे और फिर कभी किसी रमणी का भूत उतारने का साहस न करेंगे। तभी छोड़े जाओगे।

मियाँजी—मैं अपने पाक परवर्दिगार की कसम खाकर कहता हूँ कि फिर कभी किसी के घर भूत उतारने नहीं जाऊँगा।
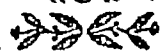
पन्नू—मैं भी काबे की तरफ़ हाथ करके कुरान को छू के कहता हूँ कि किसी औरत को फिर कभी अपनी सूरत न दिखाऊँगा।

चपला—अच्छा, दोनों भाग जाओ।

(मियाँजी और पन्नूखाँ का जाना)

एक पड़ोसी—अरे! इसने तो मियाँजी को भी भगादिया!

दूसरा—भाई! यह तो बड़ी जबरदस्त मालूम होती है।

तीसरा—मिश्रजी! इससे पूछो कि यह क्या चाहती है?

मिश्रजी—तू क्या चाहती है? कुछ लेकर इसके ऊपर से चली भी जायगी या नहीं।

चपला—मेरे नाम से पाँचसो रुपया किसी अनाथालय को दान देने की प्रतिज्ञा करो तभी चली जाऊँगी।

मिश्रजी—हैं! पाँचसौ रुपया दान देनेकी प्रतिज्ञा करूं। यह तो मेरी सामर्थ्य के बाहर है।

चपला—तो मैं भी चपला को छोड़कर नहीं जासकती।

मिश्रजी—हे ईश्वर! अब मैं क्या करूं, पाँच सो रुपया देना होगा। कहाँ, तो चार आने के मोजों के लिये घर में इतना क्लेश किया था और कहाँ अब पाँच सो रुपया खर्च करना पड़ेगा। क्या इससे कुछ कम नहीं हो सकता?

चपला—नहीं, कदापि नहीं।

मिश्रजी—अच्छा, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि पाँचसौ रुपया दान दे दूँगा।

चपला—कब दोगे?

मिश्रजी—एक मास के भीतर।

चपला—अच्छा, तो मैं जाती हूँ। देखो अपनी प्रतिज्ञा को भूल न जाना, नहीं तो बहुत बुरा होगा।

मिश्रजी—नहीं, ऐसा कभी नहीं होगा।

चपला—अब मेरी तबियत कुछ ठीक हुई है। अब मेरी छाती के ऊपर से एक प्रकार का बोझ सा हट गया, परन्तु अब भी मेरे सारे शरीर मे बड़े जोर का दर्द होता है। ज्वर का आगमन प्रतीत होता है। शीघ्र किसी सुयोग्य एवम् अनुभवी वैद्य अथवा डाक्टर को लाओ, नहीं तो मेरे कई महीनों के लिये रोग पीड़ित होजाने की सम्भावना है।

मिश्रजी—अच्छा, मैं अभी लाता हूँ।

(मिश्रजी और उनके सब पड़ोसियों का जाना)

(चम्पा का प्रवेश)

चम्पा—बहिन चपला! मैंने सुना है कि तुम्हारे ऊपर किसी चुडैल का आक्रमण हुआथा। क्या यह बात सचहै?

चपला—तुमने जो सुना है वह एक प्रकार से ठीक ही है, परन्तु यथार्थ में यह सब मेरा ढोंग था। तुमको उस दिन की बात याद होगी जब कि मेरे कृपण पति मेरे मोजे पहिनने के के ऊपर मुझसे रुष्ट होगये थे।

चम्पा—हाँ, स्मरण है।

चपला-तो बस यह उसी बात का उत्तर है। मैंने अपने कंजूस भोले भाले पति को खूब मूर्ख बनाया है। अब मुझे पर्यंक पर लेट जाना चाहिये, क्योंकि मेरे पति, चिकित्सक को लेकर आते ही होंगे। (लेटती है)

(मिश्रजी का एक डाक्टर के साथ प्रवेश)

मिश्रजी—लो यह डाक्टर साहब आगये।

डाक्टर—हे अर इज़ दी सिक आई वाण्ट टू सी दो डिसोज़ड।

मिश्रजी—डाक्टर साहब! मिश्रजी के घर में आकर रँगरेजी मत बोलो रँगरेजो। यहाँ पर तुम्हारी रँगरेजी से काम नहीं चलेगा। यहाँ पर रँगरेज का काम नहीं है। काम है वैद्य, चिकित्सक, हकोम और डाक्टर का!

चम्पा-हाँजी! हमको अभी वस्त्र रँगवाने की आवश्यकता नहीं है। अतएव रँगरेज़ी बोल कर ब्राह्मणों के घर को अपवित्र न करो।

डाक्टर—तो हम तुम्हारे मरीज का इलाज नहीं करेगा।

मिश्रजी—इसका कारण?

डाक्टर—कारण यही कि अगर हम अँगरेजी नहीं बोलेगा तो हमारा पेट फूल जायगा और हमको बदहज़मी यानी अजीर्ण होजायगा।

मिश्रजी—क्या इसका कोई उपाय नहीं होसकता?

डाक्टर—होसकता है। एक सिगार पीने से हमारा अजीर्ण दूर होजायगा।

मिश्रजी—अच्छा, पहले रोगी को देखो पीछे चुरट पी लेना।

डाक्टर-(उच्चस्वरसे) रोगी कहाँ पर है? हम उसको देखना माँगता है। उसे हमारे पास बुलाओ। हम उसके रोग का एक्ज़ामिन यानी परीक्षा करेगा।

मिश्रजी—रोगी क्या आपको दिखाई नहीं देता? यह तुम्हारे सामने ही तो सोरहा है।

डाक्टर—वैरीवैल ! उसको जगाओ, और हमारे पास बुलाओ, या हमको उसके पास ले चलो। हम अकेला नहीं जा सकता।

चम्पा—डाक्टरसाहब ! हमारे मिश्रजीको बैल न बनाओ, नहीं तो दण्ड पाओगे। कान पकड़कर निकाल दियेजाओगे।

डाक्टर—अच्छा बाबा हम हारा। अब हम अपना कान पेंठता है कि तुम लोगों के सामने फिर कभी अँगरेजी नहीं बोलेगा। अब देर न लगाओ, हमको मरीज दिखाओ। फिर बहुत जल्द हमारी फीस और दवा की कीमत लाओ।

मिश्र०—हमारे साथ आओ।

(डाक्टर का हाथ पकड़ के चपला के पलंग की ओर लेजाना, मिश्रजी का डाक्टर के हाथ को ज़ोर से खींच कर छोड़ देना, डाक्टर का पृथ्वी पर गिर पड़ना)

डाक्टर—(चिल्लाकर) ओल्ड मैन, यू आर वैरी नौटी, विकैड एण्ड फुलिश। तुमने हमको क्यों गिरा दिया ? अब जल्दी उठाओ।

(चम्पा और मिश्रजी दोनों का मिलकर डाक्टरको बड़ी कठिनता से उठाना)

डाक्टर—(चपला की नब्ज देखकर) ओ ! इनको तो तपेदिक यानी क्षयरोग होगया है। अब बचने की कोई उम्मेद नहीं है। अगर हमारे बताने के मुताबिक इलाज किया जाय तो बच जायँगी।

मिश्रजी—बतलाइये ! किस प्रकार इलाज किया जायगा।

डाक्टर-हमारे सिकनैस ओपोनैन्ट आइल की इनके सारे बदन पर मालिश कराओ, उसको ही इन्हें सुँघाओ, उसे ही
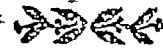
इनके कान में लगाओ। उसको ही दूध में डाल कर इन्हें पिलाओ। और उसका काजल तैयार कर इनकी आँखों में लगाओ यह तेल हमारा ईज़ाद किया हुआ है। इसका नाम सुनकर ही दुनियाँ भरकी तमाम बीमारियाँ भाग जाती हैं। कीमत है एक शीशी की एक रुपया। और बड़ी शीशी की जिसमें करीब ढाई पाव तेल आता है, कीमत ५) रुपया है। बस एक बड़ी शीशी के तेल से इनकी तमाम बीमारी काफूर होजाएगी। अब मैं जाता हूँ। मेरी फीस के पन्द्रह रुपये, पाँच दवा की कीमत के और दो रुपया गाड़ी किराया के जुमले २२) रुपया बहुत जल्दी लाओ। मुझे अब ठहरने की बिल्कुल फुर्सत नहीं है, दवाखाने में मेरे मरीज़ मेरा इन्तज़ार कर रहे होंगे जल्दी करो! जल्दी करो!!

चम्पा—डाक्टर साहब! आप अपने प्रत्येक रोगी को यही अपना नया ईज़ाद किया हुआ तेल देते हैं अथवा और कोई भी दवा देते हैं।

डाक्टर—वाह! तुम भी बड़ी बेवकूफ हो। दूसरी दवा देने की ज़रूरत ही क्या है? जब मेरे सिकनैस ओपोनैन्ट ऑइल यानी दुश्मन बीमारीयान तेल अर्थात् रोग रिपु तेल से ही दुनियाँ भर की तमाम बीमारियाँ दूर होजाती हैं तो फिर दूसरी दवा देनेकी तकलीफ़ मैं क्यों गवारा करनेलगा। लाओ! मेरे बाईस रुपये लाओ! मैं अब बात करना नहीं चाहता। जल्दी लाओ! बहुत जल्दी लाओ।

चम्पा—डाक्टर साहब! जाने के पूर्व एक सिगार तो पीते जाओ, जिससे तुम्हारा अजीर्ण दूर होजावे।

डाक्टर—अच्छा, वह भी लाओ।

(चम्पा एक सिगरेट और दियासलाई लाती है)

चम्पा—लीजिये, पीजिये !

डाक्टर—इसको जला दीजिये ।

(चम्पा डाक्टर साहब के सिगार को दियासलाई से जलाती है, जलाते समय उनकी दाढ़ी में आग लगा देती है, डाक्टर की सम्पूर्ण दाढ़ी जलजाती है)

डाक्टर—(चहला कर) ओ डैम फुलिश लेडी ! तुमने यह क्या किया ? हमारा तमाम दाढ़ी जला दिया ।

चम्पा—डाक्टर साहब ! क्षमा करें । हाथ हिल जाने के कारण दाढ़ी में भूल से आग लग गई । इसमें मेरा कोई अपराध नहीं । आशा है कि आप क्षमा करेंगे ।

डाक्टर—ओ ! तुमने हमारी दाढ़ी को जला दिया । हमारा बहुत बड़ा नुकसान किया । हमारा बहुत बड़ा अपमान किया । हम तुमको कभी माफ़ नहीं कर सकता । हम तुमको अपनी बेइज्ज़ती करने की माकूल सज़ा देगा ।

(डाक्टर साहब चम्पा की ओर भागते हैं, चम्पा भी उनको अपनी ओर आते देखकर मकान में इधर उधर चक्कर लगाती है, फिर डाक्टर साहब के चूतड़ पर एक लात जमाती है, डाक्टर औंधे मुँह ज़मीन पर गिर पड़ते हैं)

डाक्टर—ओ ! तुमने हमारा कमर तोड़ डाला, हमारे सिर को फोड़ डाला । तुमने हमको बड़ा दिक़ किया है । हम
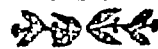
तुम्हारे ऊपर मानहानि का मुकद्दमा कोर्ट में दायर करेगा। हमारा बेग लाओ, हमको चलने दो।

(बड़ी कठिनता से धीरे २ उठ कर खड़ा होता है, फिर अपने कपड़े झाड़ता है, और पृथ्वी से अपना टोप उठा कर पहिनता है, मिश्रजी उसका बेग लाते हैं)

मिश्रजी—लीजिये डाक्टर साहब! अपना बेग।

डाक्टर—(बेग को लेकर, खोल कर देखने पश्चात्) कोई चीज़ तो नहीं चुराया।

मिश्रजी—नहीं।

डाक्टर—(जाते हुए) हम तुम दोनों के ऊपर एक हज़ार बाईस रुपये का दावा करेगा।

(जाना, पर्दा गिरना)

पांचवाँ दृश्य

स्थान—दिल्ली, औरङ्गजेब का दरबार।

(बादशाह तथा अन्य दरबारियों का यथा स्थान बैठे हुए दृष्टि आना)

(दरबान का प्रवेश)

दरबान—हुजूर! दखिन के सूबेदार साहब यानी हुजूर के मामा शायस्ताखाँ दरबार में तशरीफ़ फर्मा होते हैं।

औरङ्ग०—आने दो।

(शायस्ताखाँ का प्रवेश)

शाय०—(शाही आदाब अदा करने के बाद) हुजूर! मैं शिवाजी को गिरफ्तार नहीं कर सका।

औरङ्ग०—क्यों? क्या हुआ? सब हाल बयान करो।

शायस्ताखाँ—हुजूर! वह बड़ा जबरदस्त और चालाक है। मैंने उसकी गिरफ्तारी के लिये जी जानसे कोशिश की, लेकिन मै नाकामयाब रहा। उसको गिरफ्तार करना तो दूर किनार रहा मैंने खुद भाग कर बड़ा मुश्किल से अपनी जान बचाई है। मेरे भागने में अगर ज़रा भी देर होजाती, तो बिला शक शिवाजी की तलवार मेरा शिर धड़ से जुदा कर देती। हुजूर! मुझे माफ़ करो। शिवाजी का गिरफ्तारकरना मेरी ताक़त से बाहर है। हुजूर वह सचमुच मेरे लिये नाहर है। उसका नाम सुनकर ही मुझे बुखार आजाता है। मेरा दिमाग़ चकरा जाता है, आँखों में अंधेरा छा जाता है। हुजूर मुझ पर रहम और महरबानी करके मुझे दकिन (दाक्षिण) न भेजा जाय। किसी दूसरे सूबे का सूबेदार बना दिया जाय क्योंकि वहाँ पर पहाड़ी शेर शिवाजी बड़ा खूँखार है। उसका अजदह खौफ मुझ पर सवार है।

औरङ्गजेब—अच्छा, जाओ! मैं तुमको बङ्गाल का सूबेदार बनाए देता हूँ। यहाँ से बहुत जल्दी बङ्गाल को रवाना होजाओ।

शायस्ताखाँ—बहुत अच्छा हुजूर!

औरङ्गजेब—(वज़ीर से) वज़ीर साहब! इनके नाम बङ्गाल की सूबेदारी का हुक्म नामा लिखदो। और मिर्ज़ा राजा जयसिंह को दखिन का सूबेदार बना कर शाहज़ादे मुअज्ज़म के साथ शिवाजी से लड़ने के लिये भेजो।

वज़ीर—बहुत अच्छा हुजूर !

(वज़ीर हुक्मनामा लिखकर शायस्ताखाँ को देता है, शायस्ताखाँ शाह को सलाम करके जाता है)

औरङ्गजेब—मिर्जा राजा साहब ! आपको पचास हजार फौज के साथ शिवाजी को गिरफ्तार करने के लिये जाना होगा, आपके साथ मुअज्जम भी जायगा। और आपको ही दक्षिन का सूबेदार बनाया जाता है।

राजा जयसिंह—बहुत अच्छा हुजूर !

औरङ्गजेब—अच्छा, जाओ। जाने की तैयारी करो। जितनी जल्दी होसके उतनी जल्दी दक्षिन के लिये मय फौज के रवाना होजाओ।

(जयसिंह का जाना)

(इनायतखाँ का प्रवेश)

इनायतखाँ-(आदाबर्ज करने पश्चात्) हुजूर ! शिवाजी ने पश्चिमी समुद्र किनारे के तमाम शहरों को अपने कब्जे में कर लिया है। और पश्चिमी तट के बन्दरगाह सूरत को लगातार छः दिन तक लूटा है। यूरोप की तिजारती कम्पनियों से रुपया वसूल किया है मुग़ल सल्तनत के कई ज़िलों को फतह करके उनके हाकिमों से चौथ यानी उनकी आमदनी का चौथा भाग वसूल किया है, और उनसे हमेशा चौथ देने का वायदा करा लिया है। चारों तरफ़ उसी पहाड़ी शेर की दहाड़ है,मुग़ल सल्तनत में मचा हुआ हाहाकार है। मुसलमान रैयत की आपसे पनाह की पुकार है, आपके ऊपर ही सब दारोमदार है।

आपकी सल्तनत सारी हुई बरबाद है साहब।
मुग़ल इस्लाम रैयत का हृदय नाशाद है साहब ॥

करो रक्षा गरीबों की यही फ़रियाद है साहब ।

औरङ्ग०—इनायतखाँ ! तुम बेफिक्र रहो । शिवाजीकी गिरफ्तारी के लिये, मिर्जा राजा जयसिंह की सिपहसालारी में हमारी पचास हजार सिपह कल ही दिल्ली से दक्खन को रवाना होजायगी । मुझे हैरत है कि शिवाजी मुझसे दुश्मनी ठान कर क्या नफ़ा पायगा । शाह आलमगीर की सल्तनत में ऊधम मचाने का अञ्जाम यह होगा कि गिरफ्तार किया जायगा और बुरी तरह अपनी जान गँवायगा—

शिवा सा नासमझ होगा नहीं कोई ज़माने में ।
मज़ा क्या उसको आताहै, कोहसे सिर भिड़ाने में॥
फटेगा शिवा का ही शिर कोह का कुछ न बिगड़ेगा ।
ठानकर दुश्मनी हमसे न उसका कुछ भी सुधरेगा ॥

(इनायतखाँ का जाना, पर्दा गिरना)

दृश्य छटवाँ

स्थान—महाराज शिवाजी का शिविर ।

(शिवाजी का कुरसी पर बैठे हुए दृष्टि आना)

(शिवाजी के कुछ सैनिकों का कुछ मुसलमान स्त्रियों को कैद करके लाना)

एक सैनिक—श्रीमान् ! यह मुसलमान स्त्रियाँ यवनों के साथ युद्ध करने में बन्दी हुई हैं । इनको क्या दण्ड देने का आज्ञा होता है ।

शिवाजी—इनको छोड़दो ! और अच्छे प्रबन्ध के साथ

सबको इनके सम्बन्धियों के निकट पहुँचा दो । मैं आज्ञा देता हूँ कि युद्ध में पराजित किये हुए मुसलमानों की किसी भी स्त्री को कैद न किया जाय। और किसी स्त्रीका किसी भी प्रकार का अनादर मेरा कोई भी सैनिक न करे।

दूसरा सैनिक–महाराज! मुझको एक मुसलमान के घर में (पुस्तक दिखाते हुए) यह कुरान की पुस्तक मिली है। इसका क्या किया जाय।

शिवाजी–इसको किसी मुसलमान को देदो। मेरी आज्ञा है कि मसजिदों, कुरान और स्त्रियों का अनादर न किया जाय। मेरी आज्ञा का उल्लंघन करने वाले सैनिक को यथोचित दण्ड दिया जायगा। मुझमें औरङ्गजेब की भाँति धार्मिक पक्षपात नहीं है। मैं किसी दूसरे मज़हब का अनादर और तिरस्कार नहीं करता, मैं केवल हिन्दू जातिको मुसलमानों के अमानुषिक अत्याचारों से बचाने के लिये स्वदेश, स्वधर्म, तथा स्वजाति के हित हेतु, और गौ, ब्राह्मण, मन्दिरों एवम् स्वधर्म की रक्षा के लिये विधर्मियों से युद्ध करता हूँ। और अपनी हिन्दूजाति तथा अपने हिन्दू धर्म का अपमान करने के प्रतिकार स्वरूप उन लोगों को यथोचित दण्ड देता हूँ। मुसलमानों का विरोध तथा उनके साथ संग्राम करने का मेरा यही प्रधान उद्देश्य है। अब तुम जाओ और मेरी आज्ञा का पालन करो।

(सब का जाना)

(पहरेदार का प्रवेश)

पहरेदार–श्रीमान्! राजा जयसिंह जो कि औरङ्गजेबकी ओर से दक्षिण के सूबेदार होकर आये हैं, आपसे भेंट करने की आज्ञा चाहते हैं।

शिवाजी—इनके साथ और कौन है ?

पहरेदार—एक अनुचर और कोई नहीं।

शिवाजी—अच्छा, दोनों को ले आओ।

(पहरेदार का जाना, और कुछ समय पश्चात् राजा जयसिंह को मय उसके अनुचर के साथ लेकर आना)

जयसिंह—वीर केशरी महाराज शिवाजी नमस्कार।

शिवाजी—आइये ! राजा साहब पधारिये। आज मेरा अहोभाग्य है जो आपके दर्शन प्राप्त हुए।

जय०-महाराष्ट्र वीर ! आप ऐसा कह कर मुझे नराधम को लज्जित न कीजिये आपके समान अद्वितीय स्वजाति भक्त, स्वधर्म भक्त एवम् स्वदेश भक्त प्रतिभाशाली महापुरुष का दर्शन करके मैं अधर्मी कृतार्थ होगया। आप धन्य हैं जो अपने देश, धर्म एवम् जाति के त्राणार्थ अपना तन, मन, धन बलिदान कर रहे हैं। और अपने देश तथा जाति को स्वतन्त्र बनाने के हेतु अपने प्रिय प्राण भी प्रदान करने के लिये सदा उद्यत रहते हैं। और दुष्ट अत्याचारी, अनाचारी यवनों को बारम्बार युद्ध में पराजित कर हिन्दुओं के आत्माभिमान की रक्षा कर रहे हैं। आपसे हिन्दू जाति कदापि उऋण नहीं हो सकती। और मैं महा अधम, नीच, पतित तथा पामर हूँ। क्षत्रिय जाति के लिये कलंक का टीका हूँ, जो अपनी जाति, अपने धर्म तथा अपने देश के ऊपर महान् अत्याचार करने वाले दुष्ट अनाचारी विधर्मी औरङ्गजेब का दासत्व स्वीकार किये बैठा हूँ। परतन्त्रता की डोर में जकड़ा आ आपके समान महापुरुषों के शुभ कार्य्य में रोड़े अटका रहा हूँ हिन्दू होते। हुए भी अपनी हिन्दू जाति, अपने
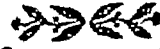
हिन्दू धर्म एवम् अपनी प्यारी भव्य भारत भूमि के भावी भाग्य का परम शत्रु बना हुआ हूँ। मैं परम पातकी, पतित, पापिष्ठ, पामर, पापी एवम् पापात्मा हूँ, धिक्कार का पात्र हूँ। और आप क्षत्रिय जाति के स्वाभिमान तथा स्वाधीनता के एवम् अपने वंश तथा हिन्दू जाति के गौरव तथा प्रतिष्ठा को प्रकाशित करने वाले प्रतापी भानु हैं।

मैं हूँ पामर पतित महान ।
पराधीन पापों की खान ॥
परम घातकी पौरुष हीन ।
क्षात्र धर्म से पूर्ण विहीन ॥
हुआ हाय! औरङ्ग अधीन ।
खोये राजा के गुण तीन ॥
तुम हो सच्चे हिन्दू वीर ।
धर्मनिष्ठ अरु धैर्य गँभीर ॥
अतिशय कीर्तिवान गुणवान् ।
जाति भक्त बल बुद्धि निधान ॥
महापुरुष हो देव समान ।
करूं आपका किम् गुणगान ॥

शिवाजी—राजा साहब! अब अधिक प्रशंसावाद की आवश्यकता नहीं। कृपा कर बतलाइये कि किस कारण आपने यहाँ आने का कष्ट उठाया है। मेरे ऊपर दया करके मेरी कुटिया को किस हेतु पवित्र बनाया है।

जयसिंह-यह तो आपको मालूम ही होगा कि औरङ्गजेब ने मुझको दक्षिण का सूबेदार बनाकर आपसे युद्ध करने के लिये भेजा है।

शिवाजी—जी हाँ, यह समाचार मुझको मेरे एक गुप्तचर ने दिया है। परन्तु आपका इस प्रकार मुझसे भेंट करने का प्रयोजन क्या है।

जयसिंह—एक विशेष प्रयोजन है। आपसे एक आवश्यक प्रार्थना है। मैं आपसे युद्ध करना नहीं चाहता। अतएव मुझको पूर्ण आशा है कि मैं जो कुछ श्रीमान् की सेवा में निवेदन करूंगा, उसको श्रीमान् मेरे ऊपर अतुलित कृपा करके स्वीकार करेंगे, मेरा महान् उपकार करेंगे। मैं आपके और औरङ्गजेब के बीच सन्धि का प्रस्ताव करना चाहता हूँ।

स्वीकार करके प्रार्थना उपकार कीजिये।
करके दया दयालु एक दान दीजिये॥
श्रीमान् दास की ये विनय मान लीजिये।
औरङ्ग के ऊपर नहीं अब आप खीजिये॥
पूरण करो करके कृपा मेरे हृदय के भावको।
मान लीजे दयामय इस सन्धि के प्रस्तावको॥

शिवाजी—क्या आप सन्धि करना चाहते हैं?

जय०—जी हाँ! आशा है आप मेरी प्रार्थना को स्वीकार करेंगे।

शिवाजी—खैर! मैं आपके विशेष आग्रह से विवश होकर औरङ्गजेब के साथ सन्धि करने को तैयार हूँ। बतलाइये! किन किन शर्तों पर आप सन्धि करना चाहते हैं।

जय०—जितने शहर अथवा क़िले आपने विजय कर हैं उनके हाकिमों से चौथ लेने का अधिकार आपको जायगा। औरङ्गजेब के दरबार से आपको राजा की उपाधि

प्राप्त होगी और शाही सेना में एक ऊँचा पद मिलेगा। कहिये आपको स्वीकार है।

शिवा०—इन शर्तों में से किसी की अवहेलना तो नहीं की जायगी।

जय०—जी नहीं! ऐसा कदापि नहीं होसकता।

शिवा०—तो स्वीकार है।

जय०—परन्तु आपको कष्ट उठाना पड़ेगा।

शिवा०—कौनसा?

जय०—आपको मेरे साथ आगरे चलना होगा। आज कल औरङ्गजेब आगरे में ही है। वहीं राजा की उपाधि और शाही सेना में कोई उत्तम तथा ऊँचा पद आपको प्रदान करेगा और सन्धि पत्र पर भी उसीके हस्ताक्षर होंगे। आशा है कि आपको आगरे जानेमें किसीभी प्रकारकी आपत्ति न होगी।

शिवा०—आपत्ति कुछ भी नहीं, मुझे आपकी बात स्वीकार है।

जय०—तो फिर क्या देरदार है?

शिवाजी—आपका कब चलने का विचार है?

जयसिंह—मुझे तो सिर्फ आपका ही इन्तज़ार है। बन्दा तो आजही रवाना होनेके लिये तैयारहै॥

शिवाजी—आज तो हम नहीं जासकते। कल अवश्य चल सकते हैं।

जयसिंह—तो कल ही सही। मुझे आपको आज्ञा सदैव शिरोधार्य है।

शिवाजी—आज आपको मेरा आतिथ्य सत्कार स्वीकार करना होगा।

हुजूर ! यह किसी वजह से बेहोश होगया है। घण्टे आध घण्टे में अपने आप होश में आजायगा।

औरङ्ग—इसको, इसके डेरे पर पहुँचादो। और जिस

मकान में यह ठहरा हुआ है, उसके चारों तरफ़ पाँच हज़ार फोज का कड़ा पहरा लगादो। सिपाहियोंको सख्त ताकीद करदो कि इसको मकान के बाहर बिलकुल न निकलने दें। तहव्वरखाँ आओ ! इस काम को तुम अञ्जाम दो।

(तहव्वरखाँ का कुछ सिपाहियों द्वारा शिवाजी को उठवा कर लेजाना) (पर्दा गिरना)

आठवाँ दृश्य

स्थान—मिश्रजी का मकान।

(मिश्रजी का बड़बड़ाते हुए प्रवेश)
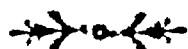
मिश्रजी—भई ! ये स्त्री चपला भी बड़ी चपल है। जैसा इसका नाम चपला है, वैसी ही उसमें चपलता और चंचलता भी कूट कूट कर भरी हुई है। नाम रखने वाले ने उसका नाम खूब अच्छी प्रकार सोच समझ और परीक्षा करके उसके स्वाभाविक गुणों के अनुसार ही रक्खा है। चपला शब्द का अर्थ है कमला अर्थात् लक्ष्मी और चंचला यानी अस्थिरा अर्थात् बिजली। इसके अतिरिक्त इस शब्द का अर्थ वेश्या, कुलटा और व्यभिचारिणी स्त्री का भी है। एक तो यह अपने नाम के अनुसार ही सर्व गुण सम्पन्न है दूसरा यथा नाम

तथा गुण है, दूसरे वह मुझ सो[illegible] वर्ष के वृद्ध की ब्याही गई है। ऐसी अवस्था मे उसके चाँचल्य का बढ़ जाना स्वाभाविक ही है। रहीम ने ठीक कहा है—

कमला थिर न "रहीम" कहि, यह जानत सब कोय।
पुरुष पुरातन की बधू, क्यों न चंचला होय॥

यदि मुझसे कोई प्रश्न करे कि चपला का विवाह कितनी आयु वाले पुरुष के साथ होना उचित और न्याय युक्त था? तो मुझको निष्पक्ष होकर यही उत्तर देना होगा कि बीस अथवा बाईस वर्ष के नवयुवक के साथ। क्योंकि जिस प्रकार एक युवक प्रौढ़ा अथवा वृद्धा स्त्री से कदापि प्रसन्न नहीं होसकता, उसी प्रकार एक युवती भी किसी अधेड़ अथवा वृद्ध पुरुष के साथ विवाहे जाने पर कभी खुश नही होसकती। नर हो अथवा नारी रुचि दोनों की एक ही समान है। जो मनुष्य स्त्रियोंकी रुचि अथवा इच्छाको पुरुषों के समान नहीं जानता वह महान् अज्ञानी है। जिस मानव को अपने आनन्द और सुख का तो ध्यान है, परन्तु स्त्री जाति के सुख एवम् आनन्द का किंचित् मात्र भी ध्यान नहीं है वह मानव नहीं दानव है। वह मनुष्य जाति पशु जाति के के समान है। जिस प्रकार नवयुवक नवीन और अछूती पत्नी पसन्द करते हैं, उसी प्रकार नव यौवनायें भी नवयुवक, वीर्यवान् एवम् बलवान पति चाहती हैं। मैंने चपलाके साथ विवाह करके बहुत बुरा काम कियाहै। विवाह करनेके पूर्व मेरी समझ में वृद्ध विवाह की हानियाँ नहीं आई थीं। उसी कारण मैं इस महान् दुष्कर्म को कर बैठा। अब मुझको महा पश्चाताप हो रहा है। वृद्धावस्था में युवती पत्नी के साथ

विवाह करने का खूब आनन्द प्राप्त हो रहा है। मेरा तो चपला की फ़रमाईशों और तायनों के मारे दिवाला निकला जाता है। कटु वाक्यों की वर्षा के मारे नाक में दम आगया है। मुझे न तो घर ही में चैन है और न बाहर ही—

बाहर सब हँसी उड़ाते हैं, घर में कामिनी डराती है।
विपदा है दोनों ओर नाथ, सरिता—खाई दिखलाती है॥

—चपला—(प्रवेश करके)

खुश कर सकते जब नहीं मुझे, तो किस बिरते पर शादी की।
अपने जीवन के साथ साथ, क्यों मेरी भी बरबादी की॥

मिश्र —क्षमा करो! चपले क्षमा करो! मैंने सचमुच तुम्हारे साथ बहुत बड़ा अन्याय किया है, जो तुमको अपने गले बाँध लिया है। अपने जीवन के साथ ही तुम्हारा जीवन भी कष्ट तथा क्लेश में डाल दिया है।

करके तुमसे ब्याह किया है मैंने अतिशय भीषण पाप।
अपने खोटे कर्मों का मैं खुद करता हूँ पश्चाताप॥

चपला—अब पश्चाताप से क्या होता है? पहिले तो मेरा सम्पूर्ण जीवन नष्ट कर दिया, जन्म भर के लिये मुझे कष्ट कर दिया। अब नित्य अपनी सूरत दिखलाकर मेरे जी को जलाते हो। किसी नदी या नाले मे गिर कर भी नहीं मरजाते हो।

मिश्र०—(दर्शकों से) सुनो, भाई साहब सुनो! वृद्ध पुरुष की पत्नी अपने पति से कैसे कटु वाक्य कहती है। (चपला से) यदि मैं मर जाऊँगा तो तुमको क्या मिल जायगा?

चपला—महान् सुख, परमानन्द। यदि तुम मर जाओगे तो मैं भी तुम्हारी सहगामिनी होकर तुम्हारे साथ सती हो जाऊँगी। इस प्रकार सदैव के लिये हार्दिक वेदना तथा कष्ट से छुट्टी पाऊँगी।

मिश्र०—परन्तु नदी नाले में डूब कर मर जाने से तो मुझे आत्म हत्या का महा पाप लगेगा।

चपला—तो फिर महाराज शिवाजी की सेना में भरती हो जाइये, और देश, जाति तथा धर्म्म के हित के लिये समर क्षेत्र में वीरों की भाँति प्राण गँवा कर स्वर्ग पद को पाइये।

मिश्र०—हैं! राम राम! भला तुमने यह क्या कहा? ब्राह्मण समरक्षेत्र में जायें। यवनों के मुकाबले तलवार चलायें और वीरों की भाँति युद्ध-भूमि में लड़कर अपने प्राण गँवायें। यह तो बिलकुल अनोखी बात है—

> भूसुर भोली जाति खड्ग कर में क्या धारे?।
> सीधे सादे विप्र करें क्या युद्ध बिचारे? ॥
> समर-भूमि के मध्य जायँगे तत्क्षण मारे।
> युगल करों को जोड़ कहें अथवा हम हारे ॥
> मत मारियेगा हमको, भिक्षुक हैं आपके हम।
> संग्राम क्या करगे?, ना हैं एक थाप के हम ॥

चपला—यह सब तुम जैसे ही ब्राह्मणों का विचार है कि ब्राह्मण जाति युद्ध नहीं कर सकती। हम विप्रों में तो ऐसे ऐसे रणकोविद एवम् बलवान हुए हैं कि जिनका नाम सुनते ही अच्छे २ क्षत्रिय महावीरों के हृदय कम्पायमान हुए हैं। विप्रवंश के भूषण वीर शिरोमणि परशुरामजी के नामसे हिन्दुओं का बच्चा बच्चा परिचित है। उनने पृथवी के सम्पूर्ण

क्षत्रिय राजाओं को अपने बाहुबल से अनेकों बार पराजित करके, उनका राज्य ब्राह्मणों को दान कर दिया था, यह बात सब कोई जानता है। इसी प्रकार कौरव पाण्डवों के शस्त्र-विद्या के शिक्षक एवम् रण-गुरु द्रोणाचार्य जी के नाम से भी सब कोई परिचित हैं। उनके रणकौशल तथा अतुलित वीरता की प्रशंसा महाभारत में भरी हुई पड़ी है। समर-क्षेत्र में उन अकेले ने ही युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, आदि पाँचों पाण्डवों के छक्के छुड़ा दिये थे, होशोहवास उड़ा दिये थे। क्या ये दोनों ब्राह्मण ऋषियों की सन्तान नहीं थे? इनके अतिरिक्त भी विप्र वंश में अनेक प्रतिभाशाली महावीर उत्पन्न होगये हैं। जो अपनी अतुलित वीरता द्वारा भारतीय वीरोंका नाम समुज्ज्वल कर गये हैं। फिर आप ब्राह्मण जाति को किस प्रकार कायर बताते हैं। अपनी जाति की स्वयं निन्दा करके अपने नाम में कलंक का टीका लगाते हैं—

किया निज लाज खोकर निन्दकों का काम किस बल पर।
भूमि के देवताओं को किया बदनाम किस बल पर॥

मिश्र०—मैं यह नहीं कहता कि हमारी ब्राह्मण जाति में वीर उत्पन्न नहीं हुए। हुए अवश्य हैं। हम लोगोंमें एकसे एक बढ़ा हुआ बलवान, बुद्धिमान, विद्वान, तपस्वी, वीर और भगवान का भक्त हुआहै। हमारी जाति सर्व शिरोमणि रही है। अन्य समस्त जातियाँ ब्राह्मणों का देवताओं के समान सम्मान, आदर, सत्कार तथा पूजा करती रही हैं। इसी कारण हम लोग भूसुर अर्थात् पृथ्वी के देवता कहलाते हैं। परन्तु अब यह बात नहीं है। हम लोग केवल नाम के ब्राह्मण कहलाते हैं। हमारी जाति अपने धर्म्म, कर्म्म

और कर्त्तव्य से बिलकुल च्युत होगई है अर्थात् गिर गई है। पहले मनुष्य केवल ब्राह्मण के गृह में जन्म लेने ही से ब्राह्मण नहीं कहला सकता था, बल्कि ब्राह्मणों के कर्म्म तथा कर्त्तव्य का पूर्ण रूप से पालन करने पर ब्राह्मण कहलाता था। सच्चा ब्राह्मण वही है जिसने ब्रह्म को पहचाना है और जो ब्राह्मण के कर्म एवम् कर्त्तव्य पर दृढ़ है। केवल ब्राह्मण के यहाँ जन्म लेने से कोई सच्चा ब्राह्मण नहीं हो सकता।

"जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते।
वेद पठनात् भवेद् विप्रः ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः॥"

अर्थात् ब्राह्मण बालक जन्म लेने के समय शूद्र, यज्ञोपवीत यानी जनेऊ ग्रहण करने पर द्विज, वेद पढ़ने पर विप्र तथा ब्रह्मको जानने पर सच्चा ब्राह्मण होता है ब्राह्मणों का मुख्य कर्म तथा कर्त्तव्य है वेद, शास्त्र, उपनिषद् आदि ग्रन्थों का पूर्ण रूप से अध्ययन एवम् मनन करना, यज्ञ करना और कराना, विद्या पढ़ना और पढ़ाना। विद्या ही सच्चे सुख का मूल है।

किसी कवि ने कहा है—

"विद्या ददाति विनयं, विनयाद्याति पात्रताम्।
पात्रत्वाद्धनमाप्नोति, धनाद्धर्म्मं ततः सुखम्॥"

अर्थात् विद्या से विनय आती है, विनय सुपात्र बनाता है, सुपात्रता धन लाती है और धन से यदि वह सुकर्म्म में लगाया जाय तो सच्चा सुख प्राप्त होता है। और जो मनुष्य साहित्य सङ्गीत कला, आदि विद्याओं से रहित हैं उनमें और पशुओं में कोई भेद नहीं है। ऐसे मनुष्य बिना सींग और पूँछ के पशु हैं। उद्भट का यह श्लोक "साहित्य सङ्गीत

कला विहीनः साक्षात् पशुः पुच्छ विषाणहीनः" बिलकुल ठीक है। वैसे तो प्रत्येक मनुष्य को ही सम्पूर्ण विद्याओं का ज्ञान प्राप्त करना परमावश्यक है परन्तु ब्राह्मण का तो यह प्रधान कर्त्तव्य है कि वह सम्पूर्ण विद्या तथा कलाओंका पूर्ण ज्ञाता एवम् महान् आचार्य्य बने। परन्तु आजकलके ब्राह्मणों मे तो क्षत्रियः वैश्य आदि जातियों का पानी भरना, रसोई बनाना, बोझ उठाना और उनसे अनादर पूर्वक अनुचित दान लेना तथा उनके यहाँ भोजन करना, विशेषतः यही गुण रह पाये हैं। अधिकाँश ब्राह्मणों ने इसी को अपना कर्म्म और कर्त्तव्य समझ रक्खा है। केवल यही नहीं, प्रत्युत बहुत से अज्ञ मूर्ख तथा निरक्षर ब्राह्मण तो भीख माँगने को ही अपना प्रधान कर्म्म तथा कर्त्तव्य बताते हैं। यद्यपि ब्राह्मण को दान लेना वर्जित नहीं है, परन्तु प्रत्येक से अनादर पूर्वक दान लेना निषिद्ध है, क्योंकि ऐसा करने से वह निस्तेज होजाता है आजकल के अधिकाँश ब्राह्मण अपने धर्म्म, कर्म्म, एवम् कर्त्तव्य से बिलकुल च्युत होगये हैं। इसी कारण उनका ब्रह्म तेज जाता रहा है। वह बिलकुल निस्तेज और प्रतापहीन हो गये हैं। इसी कारण (एतदर्थ) अन्य जातियों के हृदयों में भी उनके प्रति श्रद्धा नहीं रही है। अन्य वर्ण ब्राह्मणों का अनादर और तिरस्कार करने लगे हैं। ब्राह्मण ही समस्त हिन्दू जाति के नेता और उन्नति कर्त्ता माने गये हैं। जब ये स्वयं ही दिन प्रति दिन अधःपतन की ओर अग्रसर होरहे हैं तो फिर हिन्दू जाति की रक्षा और उन्नति किस प्रकार कर सकते हैं। इस प्रकार आजकल के ब्राह्मण हिन्दू जाति की

अवनति का प्रधान कारण बन रहे हैं। यह ब्राह्मणों के लिये अत्यन्त लज्जा और शोक का विषय है।

चपला—और आपके लिये हर्ष का विषय है अथवा शोक का आपका कर्त्तव्य, अपने पूर्वजों के समान, ब्राह्मणोंके धर्म्म-कर्म्म को पूर्ण रूपेण पालन करने का और सदाचार पूर्वक जीवन व्यतीत करने का है अथवा अपने कर्त्तव्य च्युत भाइयों के कुविचारों और कुकर्मों का आँख मींच कर अनुसरण करने का। अपने भूले हुए भाइयों को कुमार्ग से हटा कर सुमार्ग पर ले जाना और उन्हें उनकी भूल समझा देना तुमको उचित है, अथवा अपने ज्ञान चक्षु विहीन भाइयों को अधःपतन रूपी कूप में गिरते हुए देख कर भी, उनकी रक्षा न कर स्वयं भी उनके साथ गिरना तुम्हारा कर्त्तव्य है। आप अपने कर्तव्याकर्तव्य, हानि लाभ एवम् उन्नति तथा अवनति के साधनों को भली भाँति समझते हुए भी अधःपतन की ओर अग्रसर होरहे हैं। क्या ऐसा करना आपको उचितहै?

मिश्र०—नहीं।

चपला—आप युद्ध भूमि में मृत्यु के भय से जाना नहीं चाहते। क्या आपकी आत्मा मृत्यु को प्राप्त होती है? क्या वह नाशवान् है?

मिश्र०—नहीं, आत्मा तो परमात्मा के समान अजर अमर अविनाशी है। वह कभी नाश को प्राप्त नहीं होती। जिस प्रकार स्त्री पुरुष अपने फटे पुराने वस्त्रों का परित्याग कर नये वस्त्र धारण करतेहैं उसी प्रकार हमारी आत्मा भी अपने पुरातन शरीर रूपी वस्त्र का त्याग कर किसी दूसरे नवीन शरीर में प्रवेश कर जाती है।

चपला--यह जानते हुए भी आप मृत्यु से क्यों डरते हैं! आपकी आत्मा का यह वस्त्र यानी शरीर भी अब पुराना और एक प्रकार से बेकारसा होगया है। आपकी आत्मा अब शीघ्र ही इस शरीर रूपी वस्त्र को त्याग कर किसी नवीन शरीर में प्रविष्ट होने वाली है। फिर भी आप देश जाति तथा धर्म्म के हित के लिये, समर क्षेत्र में वीरों की भाँति युद्ध कर प्राण त्यागने से क्यों डरते हैं। मरना तो आपको अनिवार्य ही है अब नहीं तो कुछ दिनों पश्चात् मरोगे ही। फिर कायरों की भाँति रोगग्रस्त होकर मरने की अपेक्षा वीरों की तरह स्वदेश, स्वजाति एवम् स्वधर्म्म के हित के लिये, समर क्षेत्र में युद्ध कर, प्राण गँवा के स्वर्ग लोक क्यों न प्राप्त कीजिये। अब आप अपनी इस कायरता को त्याग दीजिये। और वीर केशरी महाराज शिवाजी की सेना मे भरती होकर स्वधर्म्म-रक्षार्थ, दुष्ट अत्याचारी तथा अनाचारी यवनों के विरुद्ध-तलवार उठाइये। अपनी जाति के हित के लिये, जाति भक्त वीरों की नाईं समर भूमि में प्राण गँवाइये। जाइये! जाइये! अति शीघ्र जाइये! विलम्ब न लगाइये।

मिश्र०-जाता हूँ मैं जाता प्यारी, रणकौशल दिखलाता प्यारी।
जाकर समर मचाता प्यारी, रिपुदल शीश उड़ाता प्यारी॥

चपला—जाओ। शीघ्र जाओ! कायर पुरुषों की भाँति केवल बातें न बनाओ। जो कुछ करना हो वह करके दिखलाओ—

निपट कायरों की तरह, करो न अब वक्तव्य।
बतलादो संसार को, वीरों का कर्तव्य॥

मिश्र०-जाता हूँ। ऐसी क्या जल्दी पड़ी है ? आज नहीं तो कल चला जाऊँगा। कुछ घर में बढ़ती अथवा भार तो हूँ ही नहीं, जो तुमने कहा और मैं चला गया। जाऊँगा अवश्य, परन्तु जब मेरा दिल चाहेगा तभी जाऊँगा।

चपला—नहीं! आज ही और इसी समय जाओ, व्यर्थ बातें न बनाओ। यदि नहीं जाना चाहते हो तो स्त्रियों के साड़ी, चोली आदि वस्त्र पहिन लो। मेहँदी, महावर, सुरमा मिस्सी, सेंदुर आदि लगालो, दाढ़ी मूँछ मुड़ालो, और लंबा घूँघट काढ़ कर घर में एक ओर बैठ जाओ। फिर मैं वीर रमणी का भेष बनाकर, महाराज शिवाजी की सेना में भरती होजाऊँगी और अपने देश, जाति तथा धर्म्म के हित के लिये यवनों से युद्ध मचाऊँगी—

वीरों की तरह आज से मैं रण में लड़ूंगी।
तुम नारी बनो युद्ध मैं यवनों से करूंगी॥
चण्डी की भाँति समर में दुष्टों को दलूंगी।
यदि महाकाल आयगा तो भी न डरूंगी॥
संग्राम में दुष्टों के शीश धड़ से उड़ादूँ।
नारी की शक्ति सबको मैं प्रत्यक्ष दिखादूँ॥

मिश्र०—अहा! क्या ये कमल के समान कोमल और शशि के समान श्वेत पाणि पल्लव तलवार चलायेंगे? कहीं मुरक जाएँगे तो मुझे लेने के देने पड़ जाएँगे। फिर मेरे प्राण घोर संकट में फँस जायँगे। ज़रा यह तो बतलाइये कि तलवार दोनों हाथों से उठाओगी अथवा एक से।

चपला—दोनों हाथों से दो तलवार चलाऊँगी। धूप में चपला की तलवारें चपला के समान चमक कर शत्रुओं के

रक्त-रङ्ग से होली खेलेंगी। क्या स्त्रियों को पुरुषों ने बिल्कुल अबला समझ रक्खा है? समय पर अबलायें सबला होना अच्छी प्रकार जानती हैं। हमारी स्त्री जाति में भी ऐसी २ वीर रमणियाँ उत्पन्न होगई हैं कि जिनने अच्छे २ महावीरों के छक्के छुड़ा दिये थे। नारी शिरोमणि जगदम्बा, जगजननी विजया यानी चण्डी देवी ने शम्भु निशम्भु महिषासुर आदि अनेक शक्तिशाली दानवों को मार कर देवताओं की अनेक बार रक्षा की है। उसने अपनी अतुलित वीरता द्वारा स्त्री जाति के नाम को अतिशय उज्जवल किया है। प्राचीन काल के अतिरिक्त आधुनिक काल में भी अनेक वीर रमणियाँ उत्पन्न होगई हैं। पट्टन के राजकुमार जयदेव की वीर पत्नी वीरमती ने अपने एक बाण से एक अत्यन्त बड़े शेरको मारा था, जाम्बती नामक एक वेश्या के उपपति कोतवालके लड़के को अपने सतीत्व की रक्षा के हेतु मौत के घाट उतारा था। उसके खून के अपराध में उसको (वीरमती को) गिरफतार करने वाले कोतवाल के सैकड़ों अनुचरों को उस अकेली (वीरमती) ने संहारा था। इसके अतिरिक्त यवन शासन काल में भी अनेक हिन्दु वीर रमणियाँ होगई हैं, जिन्होंने अपने सतीत्व रक्षार्थ शरीफखाँ आदि अनेक कामी मुसलमान नवाबों एवम् सूबेदारों को यमलोक पहुँचा कर असंख्य यवन सेना से युद्ध किया है, और अन्त में अपने सतीत्व की रक्षा होते न देख धधकती हुई अग्निमें प्रवेश करके अपने आपको भस्मी भूत बनाया है। स्वनाम धन्य महाराणा प्रतापसिंह के कनिष्ठ भ्राता शक्तिसिंह की पुत्री एवम् बीकानेर राजा के भाई पृथ्वीराज की वीर पत्नी किरणदेवी ने मुगल सम्राट

महाकामी अकबर महान् को एकदिन नौरोजके मेलेमें दिल्ली के शाही महल के भीतर अपने सतीत्व की रक्षा के लिये पृथ्वी पर पछाड़ा था। और उसकी छाती पर सिंहनी की भाँति सवार होकर गर्दन पर कटार अड़ा दिया था। उस समय अकबर ने अपने प्राण घोर संकट में फँसे हुए जानकर किरणदेवी से क्षमा की अनेक बार प्रार्थना करके, प्राण दान की भिक्षा माँगी थी और अल्लाह की सौगन्ध खाकर यह प्रतिज्ञा की थी कि तू आज से मेरी धर्म्म की बहिन है। मैं फिर कभी किसी हिन्दू स्त्री का सतीत्व नष्ट करने की किसी प्रकार की चेष्टा न करूंगा, और आजसे नौरोज का मेला भी, जो कि स्त्रियों का सतीत्व भङ्ग करने का एक आडम्बर है, बन्द कर दूँगा। यह प्रतिज्ञा और अनेक बार दया प्रार्थना करने पर, वीर क्षत्राणी किरणदेवी ने अकबर को प्राणदान देकर छोड़ दिया। अकबर ने भी अपनी प्रतिज्ञा का सदैव पालन किया। इसके अतिरिक्त भी मुसलमान शासनकाल में अनेक वीर हिन्दू रमणियाँ होगई हैं जिन्होंने अपने धर्म्म तथा सतीत्वकी रक्षा के हित कई मुसलमान बादशाह, नवाब तथा सूबेदारों का मान भङ्ग किया है, तथा कईयों को प्राण दण्ड दिया है। यही नहीं, वरन् एक एक वीराङ्गना ने कई सहस्र मुसलमानों के साथ युद्ध किया है। फिर आप हिन्दू महिला समाज को कायर किस प्रकार समझते हैं—

❀ गाना ❀

है कौन कार्य ऐसा जग में, हम जिसे नहीं कर सकती हैं।
यदि महाकाल आवे लड़ने, तो हम उससे लड़ सकती हैं॥

फिर समझ रखा कैसे कायर, तुमने हमको यह बतलाओ।
देखो वीरत्व नारियों का, या अपना हमको दिखलाओ ॥

मिश्र०—अच्छा भई ! तुम घर में बैठो। अपनी चूड़ी धारण करने वाले कोमल हाथों को व्यर्थ तलवार चलाने का कष्ट न दो। मैं महाराज शिवाजी की सेना में भरती होने जाता हूँ। और समरक्षेत्र में पहुँचने के पूर्व ही लाखों शत्रुओं के शिर धड़ से उड़ाता हूँ। करोड़ों को धराशायी बनाता हूँ, अरबों खरबों को भूमि पर सदा के लिये सुलाता हूँ, पद्मों संखों को यमपुरी पठाता हूँ, दुष्ट दुराचारी एवम् अत्याचारियों का नाम ही संसार से मिटाता हूँ। यह सब काम करके घण्टे भर के अन्दर ही तुम्हारे पास वापिस आता हूँ।

चपला—जाते हो, अथवा व्यर्थ बेमतलब की बातें बनाते हो—

जाना है अगर आपको तो शीघ्र जाइये।
ये व्यर्थ की बातें अधिक अब मत बनाइये ॥

(मिश्रजी चपला के मुख की ओर एक टक देखते हुए खड़े रहते हैं)

चपला—जाते हो या मेरे मुख की ओर देख रहे हो।

मिश्र०—जाता हूँ, ज़रा तुम्हारे रूप-सुधा का पान तो करलूं।

चपला—इससे क्या होगा ?

मिश्रजी—तुम्हारे सौन्दर्य सुधा का पान करके, मैं अमर होजाऊँगा, और फिर मुसलमानों से खूब खड्ग खट-काऊँगा।

चपला—फिर वही ऊट पटाँग बातें।

वही गुफ्तार बेढङ्गी जो पहले थी वो अब भी है।
जहाँ रफ्तार बेढङ्गी जो पहले थी वो अब भी है॥

मिश्र०—ऊटपटाँग बात नहीं है। मेरी बात का तात्पर्य यह है कि यदि मैं तुम्हारे मुख चन्द्र का दर्शन मन भरके कर जाऊँगा, तो कदाचित युद्ध क्षेत्र में मारा भी गया तो मृत्यु के समय आनन्द और प्रसन्नता पूर्वक मरूंगा।

फिर तुम्हारे दर्शन की लालसा मेरे मन मे न जायगी।
दिल की हसरत दिल में न रहने पायगी॥

चपला—तो इससे मालूम होताहै कि तुम मुझको अत्यन्त प्यार करते हो।

मिश्र०—भला तुम्हारेसमान परम सुन्दरी युवती को कौन सा मनुष्य प्यार नहीं करेगा, कौन तुम्हारे सौन्दर्य का उपासक बनना नहीं चाहेगा। मैंने तो प्रत्येक पुरुष को तुम्हारे ऊपर मरते देखा है। प्रत्येक युवक तथा प्रौढ़ को तुम्हारे कारण लम्बी साँसे भरते देखा है—

जिसे देखता हूँ वह तुम पर निगाह करता है।
जक्त का प्रत्येक पुरुष चपलाकी चाह करता है॥

चपला—बस अब रहने दीजिये ! कृपा कर माफ कीजिये ! यह हास्य तथा परिहास का समय नहीं है। तुम्हारा यह ठठोलपन मुझे नहीं सुहाता है।

मिश्र०—तो लो यह तुम्हारा हास्य रस प्रिय पति करुणा रस का दृश्य दिखाता है।

चपला—करुणारस की अभी आवश्यकता नहीं। पहले वीर रस का दृश्य दिखाइये ! अब अधिक बातें न बनाइये।

बहुत शीघ्र जाकर सेना में भरती होजाइये, और समरक्षेत्र में वीरों की भाँति अपने प्राण गँवाइये। फिर करुणा-रसकी बारी आएगी और मेरे नेत्रों के अश्रुजल से एक नई नदी बन जाएगी।

मिश्र०—और यदि मैं शत्रुओं को परास्त कर जीवित घर पर लौट आया तो ?

चपला—तो फिर हमारे हृदय में हर्ष की पताका फहराएगी। अच्छा अब जाइये।

मिश्र०—इस प्रकार के कहने से नहीं जाऊँगा।

चपला—तो फिर किस प्रकार के से जाओगे ?

मिश्र०—नाक पर उँगली रख कर और मुँह हिलाकर अनोखी अदा और प्रेमके साथ कहिये प्यारे अब आप जाइये। तब जाऊँगा।

चपला—(उसी प्रकार) प्यारे अब आप जाइये।

मिश्र०—तो लो अब जाता हूँ। मेरे पीछे घर पर हुश्यारी के साथ रहना, कहीं किसी के जाल में मत फँस जाना। नहीं तो बना बनाया काम बिगड़ जाएगा, हमारे विमल वंश में बट्टा लग जाएगा।

चपला—आप निश्चिन्त रहें। ऐसा तो कदापि स्वप्न में भी नहीं हो सकता।

मिश्रजी—अच्छा तो आओ ! जाने के पूर्व मैं ज़रा तुमसे मिल तो लूं। क्योंकि कदाचित् यह हमारी तुम्हारी अन्तिम ही भेट हो।

चपला—अरे ! आप यह क्या कहते हैं ? भ्राता भगिनी और पिता पुत्री से मिलते हैं। कही पति पत्नी भी मिलते होंगे। मानलो कि यदि तुम समरक्षेत्र में वीर गति को प्राप्त हो ही जाओगे। तो मैं तुम्हारे साथ सती होकर, तुमसे स्वर्ग लोक में मिल जाऊंगी।

मिश्र०—तो फिर कमसे कम फ़िरङ्गियों की प्रथानुसार हाथ तो मिला ही लीजिये।

चपला—यह भी नहीं हो सकता।

मिश्रजी—क्यों ?

चपला-क्योंकि मैं हिन्दू हूँ, ईसाइन नहीं। हिन्दू रमणियाँ अपने पति को समरक्षेत्र में जाने के समय, जो शब्द उच्चारण करती हैं, वह मैं कह सकती हूँ।

मिश्र०—अच्छा तो वही कहो।

चपला-प्राणनाथ जाइये ! ईश्वर की कृपा से अपने शत्रुओं पर विजय पाइये। और विजयी होकर ही मुझे मुख दिखलाइये। अन्यथा वीरों की भाँति समर-क्षेत्र में अपने प्राण गँवाइये।

मिश्र०—प्रिये ! जाता । ऐसा ही होगा। (जाना)

(पर्दा गिरना)

दृश्य नवाँ

स्थान—आगरा, शिवाजी के डेरे का मकान।
(वीर केशरी शिवाजी का पर्यंक पर लेटे हुए और
उनके निकट शम्भुजी एवम् माधवजी
का बैठे हुए दृष्टि आना)

माधवजी—महाराज! अब आपकी तबियत कैसी है?

शिवाजी—तबियत तो ठीक है, परन्तु न मालूम किस कारण से कमज़ोरी अधिक मालूम होती है। मुझमे इस समय इतनी शक्ति नहीं है कि पाँच हज़ार मुगल सेना से अकेला युद्ध करता हुआ निकल जाऊँ और दक्षिण तक पैदल पहुँच जाऊं। मुझे आशा है कि इन पाँच हज़ार यवनों के बीच से युद्ध करता हुआ निकल जाऊंगा, परन्तु घायल भी अधिक होजाऊंगा। साथ में कोई तेज़ घोड़ा भी नहीं है, जिस पर चढ़ कर भाग निकलूं और न अधिक आदमी ही हैं। हमारे मनुष्य कुल बीस हैं। इतने थोड़े मनुष्य पाँच हज़ार सेना का सामना किस प्रकार कर सकते हैं। यदि युद्ध करेंगे तो सब मारे जायेंगे। यदि मैं अकेला बच कर भाग भी निकला तो घावों से पहचाना जाऊँगा, और औरङ्गजेब के आदमियों द्वारा कहीं न कहीं पकड़ा जाऊँगा। क्योंकि यह तो एक मानी हुई बात है कि औरङ्ग-जेब मेरे भाग निकलने का समाचार सुन कर अपने अश्वा-रोही सैनिकों को मेरी गिरफ्तारी के लिये चारों तरफ़ भेजेगा। अतएव बलपूर्वक भाग कर सकुशल दक्षिण पहुँच जाना तो मुझको अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है। परन्तु

लाचारी है, परिस्थिति ही ऐसी आपड़ी है। मैं अब अधिक दिन औरङ्गजेब की नज़र कैद रहना नहीं चाहता। यहाँ से भाग निकलने का और कोई उपाय भी समझ में नहीं आता है। अतः मुझको यहाँ से अपने वीरत्व और साहस के भरोसे के ऊपर ही भाग निकलना चाहिये।

माधवजी—परन्तु महाराज! आप अभी अस्वस्थ हैं, इस हेतु यहाँ से निकलने में बल का प्रयोग न कीजिये। इस समय आप अपनी कूट नीति से काम लीजिये। राजा के लिये कूट नीति कहीं पर वर्जित नहीं, और कूट नीति बिना राजा का काम भी नहीं चल सकता। औरङ्गजेब ने जब आपको विश्वासघात से नज़र कैद कर दिया है तो क्या आपका यहाँ से चतुरता द्वारा निकल जाना कोई अनुचित कार्य्य है? जो अपने साथ जैसा बर्ताव करे उसके साथ वैसा ही बर्ताव करना तो कहीं पर भी अनुचित नहीं बतलाया गया। आप तो यहाँ से बलपूर्वक निकल भी सकते हैं, परन्तु राजकुमार शम्भुजी का बल पूर्वक भाग निकलना तो मुझको बिल्कुल असम्भव प्रतीत होता है। ईश्वर न करे यदि राजकुमार का कोई अनिष्ट होगया तो हम सब के लिये कितने विषाद की बात है। अतएव आप अपना हानि लाभ स्वयं सोच सकते हैं। मुझको तो जो आज्ञा देंगे उससे कभी नहीं इनकार है। आपका यह तुच्छ सेवक आपकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करने के लिये सदैव तैयार है।

शिवाजी—तो मुझको भी अपने स्वामिभक्त सेवक की सलाह सदैव स्वीकार है। बतलाइये? तुमने यहाँ से निकलने का कौनसा उपाय सोचा है।

माधवजी—जबसे आप अस्वस्थ हुए हैं तभी से हम प्रति दिन दस बारह मन मिठाई गरीब कङ्गालों को बाँटने के लिये शहरमें भेजते हैं। मिठाई टोकरों में भर कर आती है। आज मिठाई के एक टोकरे में आप बैठ जाइये और एक में शम्भुजी बैठ जायँगे। इन दोनों टोकरों के ऊपर कुछ थोड़ी थोड़ी मिठाई रख दी जायगी। बाकी टोकरे मिठाई से भरे रहेंगे। पहरेदार समझेंगे कि यह सब मिठाई के टोक हैं। उनको कुछ भी सन्देह नहीं होगा और वे प्रति दि की भाँति उनके लेजाने में कुछ भी आपत्ति नहीं करेंगे टोकरों को उठाने वाले भी रोज की तरह हमारे आदमी ह होंगे। आप दोनों के लिये और आपके साथ जाने वा अन्य मनुष्यों के लिये साधुओं के से गेरुए कपड़े रँग का एक टोकरे में रख दिये जायँगे। उस टोकरे के मुँह पर भी मिठाई रख दी जायगी। किसी एकान्त के स्थान में आप दोनों को टोकरों में से निकाल लिया जायगा। वहाँ पर आप सब गेरुए वस्त्र धारण करके शरीर पर भभूत मल लेना फिर आपको कोई भी मुसलमान नहीं पहचान सकता। इस उपाय से आप निर्विघ्न दक्षिण पहुँच जायँगे।

शिवाजी—उपाय तो उत्तम है, परन्तु कदाचित् कोई मुसलमान हम लोगों को देखने के लिये अन्दर चला आया और उसको मेरा पलङ्ग खाली देख कर कुछ सन्देह हुआ तब क्या होगा?

माधवजी—इसका उपाय भी हो जायगा। मेरा क तथा शरीर का रङ्ग आपके कद तथा रङ्ग से बहुत कुछ मिलता जुलता है। मैं आपके पलंग पर कपड़ा ओढ़ क

सोऊंगा। मेरा एक हाथ खुला रहेगा। उस हाथ की कनिष्ठा अँगुली में आपकी अंगूठी पहिन लूंगा फिर जो कोई मुगल सैनिक देखने आवेगा, वह मुझको ही महाराज शिवाजी जानकर लौट जावेगा।

शिवाजी—परन्तु ऐसा करने से तुम विपत्ति में फँस जाओगे। मैं अपने जीवन के हेतु दूसरे मनुष्य को संकट-ग्रस्त करना नहीं चाहता।

माधवजी—परन्तु महाराज! आपका जीवन मेरे जीवन से अत्यन्त अधिक मूल्यवान है।

शिवाजी—नहीं, संसार में प्रत्येक प्राणी का जीवन एक समान है।

राजा हो या रंक हो, हैं सब एक समान।
पशु पक्षी निर्धन धनी, सम है सबकी जान॥

माधवजी—श्रीमान्! मेरे समान पुरुष तो संसार में अनेकों होंगे, परन्तु आपके समान महा पुरुष संसार में बड़ी कठिनता से जन्म लेते हैं। आप भारतमाता के सच्चे सपूत हैं आपका अभाव हिन्दू जाति को अत्यधिक कष्ट-प्रद और उसकी उन्नति का बाधक होगा। यदि मेरी मृत्यु भी होजायगी, तो हिन्दू जाति की उन्नति में कुछ भी बाधा न आयगी। द्वितीय आप स्वामी और मैं सेवक हूँ। आप राजा और मैं प्रजा हूँ। आपका जीवन बहुमूल्य है। स्वामी के जीवन के सन्मुख सेवक के जीवन का कुछ भी मूल्य नहीं। स्वामी के हित के हेतु सेवक को सदैव अपने प्रिय प्राण परित्याग करने के लिये तत्पर रहना चाहिये। यही सेवक का प्रधान धर्म्म एवम् कर्त्तव्य है। अतएव

दास के ऊपर अत्यन्त कृपा करके सेवक की विनय स्वीकार कीजिये, और आज्ञा दीजिये कि मैं टोकरे ले आऊँ क्योंकि मिठाई ले जाने का समय होगया। मेरी आप कुछ चिन्ता न कीजिये। मैं किसी न किसी प्रकार अपनी चतुरता द्वारा निकल आऊंगा। आप निश्चय जानिये मैं बहुत शीघ्र आपकी-सेवा में उपस्थित होजाऊंगा।

शिवाजी—अच्छा, जाओ! टोकरे ले आओ। मुझे स्वीकार है। (अंगूठी उतार कर) यह मेरी अंगूठी लो।

(अंगूठी लेकर माधवजी का जाना और शीघ्र ही कुछ आदमियों के साथ मिठाई के कुछ भरे और दो खाली टोकरे लेकर आना)

माधवजी—लीजिये श्रीमान्! बैठ जाइये।

(एक टोकरे में शिवाजी का और दूसरे में शम्भुजी का बैठ जाना, माधवजी का दोनों टोकरों के ऊपर कुछ मिठाई रख देना आदमियों का सब टोकरे उठा कर लेजाना, माधवजी का कपड़ा ओढ़कर पलङ्ग पर सोजाना, सीन का ट्रॅन्सफर होना, मकान के फाटक और मुगल पहरदारों का पहरा देते हुए दिखलाई देना, अन्दर से शिवाजी के आदमियों का सिर पर मिठाई के टोकरे रक्खे हुए निकलना)

एक पहरेदार—क्या मिठाई बाँटने का वक्त होगया?

शिवाजी का एक मनुष्य—जी हाँ खाँ साहब! होगया।

पहरेदार—तो लाओ हमारी मिठाई देते जाओ।

(एक मनुष्य का पहरदार को एक टोकरे में से निकाल के कुछ मिठाई देना, इसके पश्चात् सब टोकरेवालों का चला जाना) (पर्दा गिरना)

दसवाँ दृश्य

स्थान—रायगढ़, महाराज शिवाजी का दरबार।
(महाराज शिवाजी का राजसिंहासन पर बैठे हुए और सब दरबारियों का यथा स्थान दिखलाई देना। गाने वालियों का नाचते हुए प्रवेश)

गाने वाली— (नाचना और गाना)

हाँ! सब हर्षाओ, सब पुलकाओ, खुशी मनाओ आज।
वीर शिवाजी हुए हैं दक्षिण के अधिराज।
दीनपाल के शीश पर, आज रखा है ताज॥
ये सुख की घड़ी है, खुशी बड़ी है, हुए सब पूरण काज।
हाँ! सब हर्षाओ, सब पुलकाओ, खुशी मनाओ आज॥
सब मिलकर नाचो नारी, धारण कर सुन्दर सारी।
आई बसन्त ऋतु प्यारी, बारी पर यौवन भारी॥
फूली हैं सब फुलवारी, चलो देखें साज समाज।
हाँ सब हर्षाओ, सब पुलकाओ, खुशी मनाओ आज॥

पहला भाट—सुख सम्पत्ति विभव बढ़े, रिपुबल हो सब नाश।
दूसरा भाट—महाराज की यश ध्वजा, फहरावे आकाश।
तीसरा भाट—अरिन के दल सैन समर मे सामुहाने।
टूक टूक सकल कै डारे घमसान में॥
बार बार करो महानद परवाह पूरो।
बहत हैं हाथिन के मद जल दान में॥
भूषण भनत महाबाहु भोसला भुआल।

सूर रवि को सो तेज, दीखत कृपान में ॥
माल मकरन्द जू के नन्द कलानिधि तेरो ।
सरजा शिवाजी जस जगत जहान में ॥

चौथा भाट—सक्र जिमि शैल पर, अर्क तम फैल पर ।
बिघन की रैल पर, लम्बोदर देखिये ॥
राम दसकन्ध पर, भीम जरासन्ध पर ।
भूषण ज्यों सिन्धु पर कुंभज विशेखिये ॥
हर ज्यों अनङ्ग पर, गरुड़ भुजङ्ग पर ।
कौरव के अङ्ग पर पारथ ज्यों पेखिये ॥
बाज ज्यों विहँग पर, सिंह ज्यों मतंग पर ।
मलेच्छ चतुरंग पर शिवराज देखिये ॥

पाँचवाँ भाट—साहि तनै सरजा शिवा की सभा जामधि है ।
मेरु वारी सुरकी सभा को निदरति है ॥
भूषण भनन जाके एक एक सिखर ते ।
केते धौं नदी नद की रैल उतरात है ॥
जोन को हँसनि जोति हीरामनि मन्दिरन ।
कन्दरन में छबि कुहू की उछरति है ॥
ऐसो ऊँचो दुरग महाबली को जामें नख ।
तावलि सों बहस दीपावली करति है ॥

छठा भाट—ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहन वारी ।
ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहाती हैं ॥
कन्दमूल भोग करें कन्दमूल भोग करें ।
तीन बेर खातीं सो बीन बेर खाती हैं ॥
भूषन शिथिल अंग भूषन शिथिल अंग ।
विजन डुलातीं वे तौ विजन डुलाती हैं ॥

भूषण भनत शिवराज वीर तेरे त्रास ।
नगन जड़ाती वे तै। नगन जड़ाती हैं ॥

एक दरबारी—इसका अर्थ भी कहिये! बिना अर्थ के समझ में नहीं आया ।

छठा भाट—बहुत अच्छा सुनिये— ❀ गाना ❀

जो बेगम शाह नवाबों की, ऊंचे महलों में रहती थीं ।
मिष्टान्न मिठाई खाती नित, इक पल भी भूख न सहती थीं ॥
गरमी में उफ़ उफ करती थीं, पंखा जो नित्य झलाती थीं ।
थी खश की टट्टी लगी हुई, तो भी वे चैन न पाती थीं ॥
गहने से लदने के कारण, जिनका शरोर आलसी बना ।
थीं जड़ी हुई रत्नों से जो, खाने को नहीं है उन्हें चना ॥
जो तीन बार खातीं पहले, अब तीन बेर बस खाती हैं ।
निर्जन बन में घूमती फिरें, रहने को घर नहीं पाती हैं ॥
क्षुधासे शिथिल शरीर हुआ, गिरि गुफ़ामे दिवस बिताती हैं ।
नङ्गी हैं वस्त्र विहीना हैं, जाड़े से नित्य जड़ाती हैं ॥
वीरत्व आपका वीर शिवा, यवनों पर धाक जमाता है ।
दुर्जन दल लख तेरो सूरत, बिन मारे ही मर जाता है ॥

शिवा०-(कोषाध्यक्ष से) कोषाध्यक्ष साहब! इन सबको कोषागार से दो दो हज़ार रुपया देकर बिदा करो ।

कोषा०—बहुत अच्छा श्रीमान्!

(कोषाध्यक्ष, गायिकाओं और भाटों का प्रस्थान)

(तानोजी और मिश्रजी का प्रवेश)

तानोजी—(प्रणाम करने पश्चात्) महाराज! बीजापुर के सुलतान सिकन्दर आदिलशाह और गोलकुन्डा के सुलतान

अबुलहसन दोनों ने हमारी आधीनता स्वीकार करली। दोनों सुल्तानों ने रायगढ़ राज्य को सदैव चौथ देने की प्रतिज्ञा की है। सुल्तान सिकन्दर आदिलशाह और अबुलहसन दोनों ही आज दरबार में उपस्थित होकर आपको भेट देंगे।

शिवा०—बहुत अच्छा है।

मिश्रजी-नष्ट होय सब शत्रुबल, बढ़ै सुकीर्ति प्रताप।
दोनों के दुख दलन को करण तुल्य हो आप॥
सदा राज्य, सीमा बढ़े, निर्मल मति हो तोर।
सब जग के राजान में, हो सबका सिर मोर॥

शिवा०—(तानाजी से) तानाजी! यह कौन हैं?

ताना०—महाराज! यह पूना के एक ब्राह्मण हैं। कुछ दिनों से हमारी सेना में भरती होगए हैं। इनने हालके बीजापुर और गोलकुण्डा के युद्धों मे अत्यन्त वीरता प्रदर्शित की है, इसी कारण मै इनसे परम प्रसन्न हूँ। अब मैं दरबार में इनके योग्य कोई उत्तम पद दिलाने के लिये अपने साथ लाया हूँ।

शिवा०—(मिश्रजी से) बैठिये महाराज! आज मेरे अहोभाग्य हैं, जो एक वृद्ध विप्र ने अपने पावन पादों द्वारा इस दरबार को पवित्र बनाया है, मेरे मान को बढ़ाया है। प्रणाम महाराज!

मिश्रजी—(कुरसी पर बैठते हुए) आयुष्मान राजन्!

शिवा०—तानाजी! आपभी बैठिये।

(तानाजी का भी कुरसी पर बैठना)

मिश्र०—(खड़े होकर) महाराज! मैंने कुछ कविता बनाई है, उसे सुनाना चाहता हूँ।

शिवा०—सुनाइये।

मिश्र–शाह सुत शिवराज भौंसला भुआलजी का,
भानु के समान यश छाया है जहान में।
कौन है प्रतापी नृप उनकी जो रीस करे,
औ कहे कटु शब्द कोई उनकी शान में॥
शत्रु सैन मारन को, दुष्ट मान झारन को,
सिंह सम कूदे शिवा रण के मैदान में।
शिवा के समान वीर शिवा को ही जानिये,
ऐसा अन्य वीर वर आता नहीं ध्यान मे॥

नृपति भौंसला भानु समान। शिवा प्रतापी है बलवान।
शीलवान बल बुद्धि निधान। कीर्ति श्वेत है सुधा समान॥
दलन हेतु दुष्टों का मान। है कृशानु सम शिवा कृपान।
रखते दीन जनों का ध्यान। निर्बल के हैं शिव ही प्रान॥
हैं अति ज्ञानवान मतिमान। राजनीति को हैं वरखान।
शस्त्र शास्त्र में निपुण महान। आरत भारत की हैं जान॥
किसे बनाऊँ शिव उपमान। मिलती उपमा नहीं समान।
शिवा पुत्र है शिवा समान। कार्तिकेय सम शिव को जान॥
करूँ अधिक अब क्या गुणगान। चिरंजीव हो भूप प्रधान।

शिवाजी—महाराज! आपको किस नामसे सम्बोधन किया जाया करे।

मिश्र—श्रीमान्! मुझको सब मिश्रजी कहते हैं।

शिवा०—अच्छा, मिश्रजी! मैं आपको अपने धार्मिक मन्त्री का पद प्रदान करता हूँ। मेरे कोषागार से दस लाख रुपया वार्षिक धार्मिक कार्यों में दान दिया जाया करेगा। विद्वान ब्राह्मणों को यथोचित धन सदैव दान किया जायगा।

वेद का अध्ययन करने वाले विप्रों को उनकी आवश्यकतानुसार प्रतिवर्ष चावल गेहूँ आदि अन्न दियाजायगा। विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति मिला करेगी। दीन दुखियोंको अन्न वस्त्र आदि आवश्यक सामग्री सदैव वितरण की जावेगी। दान सम्बन्धी प्रत्येक कार्य आपके ही विभाग से होगा। कहिये! आपको उक्त पद ग्रहण करना स्वीकार है।

मिश्र०—स्वीकार है श्रीमान्!

(कोषाध्यक्ष का प्रवेश)

शिवा०—कहिए! कोषाध्यक्षजी सब मनुष्यों को पुरस्कार वितरण कर दिया।

कोषा०—जी हाँ महाराज।

शिवा०—अच्छा, इन मिश्रजी को पाँच सहस्र रुपया और देदो।

कोषा०—बहुत अच्छा, श्रीमान्!

(मिश्रज और कोषाध्यक्ष का जाना)

शिवा०—(दरबारियों से) समस्त उपस्थित दरबारी गण! मैं जोकुछ निवेदन करता हूँ उसे ध्यान पूर्वक श्रवण कीजिये। मैं अपने शासन प्रबन्ध के जो नियम बनाना चाहता हूँ वे ये है आप लोगों में से एक मनुष्य लिखता जाय।

(एक मनुष्य कागज लेखनी तथा दावात लेकर लिखने को तत्पर होजाता है)

(१) मेरा साम्राज्य चौदह प्रान्तों या सूबों में विभक्त किया जायगा। प्रत्येक प्रान्तमें मज़बूत क़िलेबन्दी होगी, प्रत्येक किला मेरे विश्वासी मरहठे सरदारों के आधीन रहेगा।

(२) मुझको राज्य कार्य्य में सहायता देने के लिये आठ मन्त्रियों की "अष्ट प्रधान" नामक एक सचिव सभा स्थापित की जायगी। प्रत्येक मन्त्री राज्य के एक खास विभाग का अधिकारी होगा और प्रधान मन्त्री पेशवा कहलाएगा। राजा की अनुपस्थिति में भी यह सचिव सभा शासन कार्य्य जारी रक्खेगी।

(३) मन्त्रियों के पद आनुवंशिक नहीं होंगे। यानी किसी मन्त्री की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र आदि मन्त्री नहीं बनाया जायेगा। जो उक्त पद के लिये सर्वथा योग्य होगा, वही मन्त्री पद को प्राप्त कर सकेगा। किसी भी मन्त्री, अफ़सर अथवा राज कर्मचारी को वेतन के बदले जागीर नहीं दी जायेगी।

(४) ठेके से लगान वसूल करने की प्रथा बन्द की जाती है, क्योंकि इस प्रथा द्वारा जमींदार लोग किसानों पर अत्याचार करते हैं। प्रत्येक कृषक सरकारी लगान स्वयं राज्य के कोष में दाखिल करेगा। उसकी उसे उसी समय रसीद दी जायेगी।

(५) गाँवों का प्रबन्ध करने के लिये पटैल अथवा मुखिया होंगे और उनके ऊपर देशाधिकारी, तालुकेदार और सूबेदार रहेंगे। लगान का बन्दोबस्त प्रति वर्ष हुआ करेगा। बंजर भूमि में खेती करने वालों को बीज और मवेशी खरीदने के लिये राज्य से रुपया दिया जाएगा। जो कोई सरकारी कर्मचारी घूस लेगा अथवा प्रजा के साथ अत्याचार करेगा उसको अत्यन्त कठोर दण्ड दिया जायगा।

(६) सैनिक प्रबन्ध में दस सिपाहियों के ऊपर एक

नायक पचास के ऊपर हवलदार, सौ के ऊपर जुमलादार, और एक हजार के ऊपर एक हजारी होगा। अश्वारोहियों में २५ सवारों पर एक हवलदार, ५ हवलदारों पर एक जुमला दार, और ५० जुमलदारों के ऊपर एक हज़ारी रहेगा। इनके ऊपर पंचहज़ारी और प्रधान सेनापति रहेंगे। दोसौ तोपें सदैव युद्ध के हेतु तैयार रक्खी जायेंगी। स्थल सेना के अतिरिक्त युद्ध के लिये जहाज़ी बेड़ा भी सदैव तत्पर रहेगा।

(७) सातवाँ और अन्तिम नियम यह है कि कोई भी बलवान और शक्तिशाली व्यक्ति मेरी निर्बल प्रजा पर किसी भी प्रकार का अन्याय अथवा अत्याचार नहीं करने पाएगा।

नहीं अन्याय होसकता किसी भी दीन के ऊपर।
न अत्याचार कर सकता कोई बलहीन के ऊपर॥
मेरी निर्बल प्रजा का दिल नहीं कोई दुखाएगा।
करेगा जो कोई ऐसा कठिन वह दण्ड पाएगा॥

एक दरबारी—महाराज! आप सचमुच धर्मावतार हैं। यदि आपके राज्य और शासनकाल में भी अन्याय नहीं होगा तो क्या भोग विलासों में लिप्त, अपने राज्य मद में डूबे हुए, विषय जाल में फँसे हुए और अपने सुख को सुख समझने वाले धर्मान्ध स्वार्थी राजाओं के राज्य में न्याय होगा?—

अन्धे बने हैं जो नृपति धर्मान्धता के रोग से।
अवकाश जिनको है नहीं अपने विषय-विष-भोग से॥
वे क्या समझते न्याय को, क्या भूप का कर्त्तव्य है।
शोणित प्रजा का चूस लें, उनका यही मन्तव्य है॥

(दरबान का प्रवेश)

दरबान—श्रीमान् ! बीजापुर और गोलकुण्डा क सुलतान पधारे हैं।

शिवा०—(दरबारियों से) कुछ दरबारी जाओ और उनको आदर पूवक ले आओ।

(दरबान और कुछ दरबारियों का जाना और दोनों सुलतानों को लेकर आना)

सुलतान सिकन्दर व अबुलहसन—आदाबर्ज महाराज !

शिवा०—आइये सुलतान ! तशरीफ़ रखिये।

(सुलतान बीजापुर और गोलकुण्डा का कुरसियों पर बैठना)

शिवा०—कहिये जनाब ! यहाँ पर आने को किस लिये तकलीफ़ उठाई है ?

सुलतान सिकन्दर—महाराज ! बीजापुर और गोलकुण्डा दोनों रियासतें आपके साथ सुलह करना चाहती हैं।

शिवा०—किन शर्तों पर।

अबुलहसन—हम दोनों सुलतान आपकी आधीनता मंजूर करने को तैयार हैं। और इकरार करते हैं कि आपको हमेशा चौथ देते रहेंगे। इसके बदले में आपको, दिल्ली का बादशाह या हमारा कोई और दुश्मन, जबकि हमारी रियासतों पर चढ़ाई करेगा उससे जङ्ग करके हमारे राज्य की रक्षा करनी पड़ेगी। हमारी सल्तनतों पर जब कभी भी किसी तरह की मुसीबत आयगी तो आपको हम दोनों सुलतानों की मदद करनी होगी। इसके बदले में हम दोनों सुलतान अपनी अपनी सल्तनत में से कुछ अच्छे इलाके आपकी नज़र करेंगे हमको उम्मेद है कि इन शर्तों पर आपको हमारे साथ सुलह करने में कुछ भी पशोपेश न होगा।

शिवा०—पशोपेश कुछ भी नहीं है। मुझको सन्धि करना स्वीकार है।

सिकन्दर—तो फिर सुलहनामे लिख लिये जावें और उन पर तीनों के दस्तखत होजाने चाहियें।

शिवा०—(दीवन से) दीवान साहब! सन्धिपत्र तैयार कीजिये।

दीवान—बहुत अच्छा महाराज!

(चार सन्धिपत्र लिखने पश्चात)

लीजिये! श्रीमान्! तैयार हैं।

(महाराज शिवाजी, सिकन्दर आदिल शाह और अबुलहसन तीनों का संधिपत्रों को पढ़ कर हस्ताक्षर कर देना। दो सन्धिपत्र शिवाजी अपने निकट रख लेते हैं और एक २ सिकन्दर व अबुलहसन को दे देते हैं)

शिवाजी—आप दोनों सुलतानों को कुछ दिनों तक हमारा आतिथ्य सत्कार स्वीकार करना होगा।

सिकन्दर व अबुलहसन—हमको कुछ भी उज्र नहीं है।

शिवाजी—(माधवजी से) माधवजी! इनकी मेहमानदारी का अत्युत्तम प्रबन्ध होना चाहिये। इनके आदर सत्कार में किसी प्रकार की त्रुटि न हो।

माधव०—(खड़े होकर) बहुत अच्छा श्रीमान्!

(प्रस्थान)

(पर्दा गिरना)

ग्यारहवाँ दृश्य

स्थान—रायगढ़ एक रमणीक उद्यान।
(रमाबाई, कमला, विमला आदि का क्रीड़ा करते हुए दृष्टि आना)

सब— ❀ गाना ❀

आली हरयाली आई, मनहर बसन्त ऋतु प्यारी।
फूली है सब फुलवारी, हर वस्तु हुई मनवारी॥
कुहकति है कोकिल कारी, जिसकी बोली मृदु भारी।
लगती है सबको प्यारी, आली हरयाली॥ आई०॥
गूँजत है भौंरा काला, आला औ अति मतवाला।
पीता है रस का प्याला, घूमत वह डारी डारी॥
आली हरयाली आई, मनहर बसन्त ऋतु प्यारी।
बहता बतास है मनहर जो है अति सबको सुखकर॥
हिम, मंद, सुगंध सुहावन, सबके मनको अतिभावन।
सुमनों की छवि है न्यारी, आली हरयाली आई॥

कमला—प्यारी बसन्त ऋतु आई है।

विमला—जो सबके ही मन भाई है॥

पुष्पा—सबको ही खुशी सवाई है।

रमा—प्रियतम ने देर लगाई है॥ इस हेतु मुझे बिलकुल चैन नहीं। जबसे उनका मुझसे विच्छेद हुआ है तबसे मेरे सूखे नैन नहीं। मुझे सुखदाता दिन और रैन नहीं—बिना दर्शन मुझे उनके नहीं है चैन इक पल भी।
न पाती कल मैं कौतुक[1] से न भाता है मुझे अल[2] भी॥

१—उत्सव, २—भूषण।

नहीं सौन्दर्य सुमनों में, न शीतलता है चन्दन में ।
नहीं है चैन मन्दिर में, न है कल मुझको उपवन में ॥
नहीं है कल मुझे कल से नहीं दर्शन किये उनके ।
न मैंने सौख्य पाया है किसी की बात सुन करके ॥

पुष्पा०—सखी ! इतना न अकुलाओ, इतना न घबड़ाओ, धैर्य धारण करो । तुम्हारे प्राणनाथ अभी आते ही होंगे—आपके मुख कमल को शम्भु रवि आकर खिलाएगा ।

प्रिया के प्यासे नयनों को दर्श पीयूष पिलाएगा ॥
अभी आकर रमा प्रीतम तुम्हें सूरत दिखाएगा ।
तुम्हारा दुख नसाएगा तुम्हें कौतुक सिखाएगा ॥

विमला—वो निकला चंद्र है देखो कुमुदिनी के खिलाने को ।
वो आये शम्भुजी देखो तुम्हें हर्षित बनाने को ॥

(शम्भुजी (सम्भाजी) का प्रवेश)

शम्भु—प्रिये ! तुम्हारा मुख कमल कुम्हलाया हुआ क्यों है ? रङ्ग बदरङ्ग क्यों है ? प्रफुल्लता भङ्ग क्यों है ?—

बता दीजे मुझे प्यारी क्या तुमने दुःख पाया है ।
किसी दुर्वृत्त दुर्जन ने तुम्हें क्या कुछ सताया है ॥
किसीने गर सताया हो तो उसका काल आया है
मेरी तलवार से उस दुष्ट का फौरन सफाया है ॥

प्रभा—जी हाँ ! इनको आपकी अनुपस्थिति में एक अत्यन्त शक्तिशाली व्यक्ति सताता है । इनको अनेक प्रकारकी यातना और वेदना दिखाता है । परंतु शोक है कि आप उस पर कदापि विजय प्राप्त नहीं कर सकते और वह आपको सदैव परास्त कर सकता है ।

शम्भु—क्या वह इतना शक्ति सम्पन्न है ? उसका नाम क्या है ?

प्रभा—उसका एक नाम नहीं, अनेकों नाम हैं।

शम्भु—बतलाओ, कौन कौनसे नाम हैं। और वह मेरी प्रिया को मेरी अनुपस्थिति में क्यों कष्ट देता है ?

प्रभा—सुनिये उसके इतने नाम हैं—

मनसिज, मन्मथ, मदन, हरि, मीनकेतु नवशङ्क ।
कुसुमवाण, शम्बरदलन, मयन मनोज अनङ्ग ॥
विश्व-विमोहन, असमशर, विश्वकेतु, झषकेतु ।
मकरध्वज अरु मनोभव, वीर, वारिचर केतु ॥
सुमनचाप, सारङ्ग पुनि, दर्पक, वाम, उदार ।
कामदेव, पेतुक, अतनु, अनन्यज, स्मर, मार ॥
वारिवाह अरु ब्रह्मभू, दिन दुलहा, कुसुमेश ।
शंकर रिपु, कंदर्प पुनि, रति पति अरु स्वप्नेश ॥
प्रद्युम्न अरु, इक, पञ्चशर, गातहीन भी जान ।
आत्मज अरु है आत्म भू, नाम अनेक बखान ॥

शम्भु०—ओ हो ! इतने नाम ? अच्छा वह मेरी प्रियतमे को कौनसा कष्ट देता है ?

प्रभा—वह भी सुनिये—

॥ सवैया ॥

नित काम सतावत है इनको तकि के वह वाण चलावत है। तिल, कुन्द, बधूक, मधूक शिलीमुख की नित मार लगावत है॥ अपने अनुकूल वसन्त हितू युत विश्व विमोहन

शम्भु—तो लीजिये। (रम्भा के गालों पर दो हल्की थपत लगाता है) क्या उपहार की भी दरकार है?

रम्भा—मुझे कब लेने से इन्कार है।

शम्भु—(अपने गले से मोतियों की माला उतार कर) लो लीजिये।

रम्भा—गले में पहना दीजिये।

(शम्भुजी अपनी मुक्ता माला रम्भा के कण्ठ में पहनाता है)

रम्भा—यह हार मेरे गले मे कैसा लगता है कुमार!

शम्भु—तुम्हारे गोरे गोरे युगल स्तनों पर यह मोतियों का हार हिलता हुआ इस प्रकार दृष्टिगोचर हो रहा है मानो कामदेव का श्वेत कुसुमशर काम के खिलौनों के साथ खेल कर रहा है। रम्भा! सचमुच इस समय तुम रमा और रम्भा को भी मात कर रही हो। तुम्हारी सुन्दरता गजब ढा रही है, मेरे सीने पर आरा चला रही है। मैं तुम्हारे इस अनुपम सौन्दर्य पर बिना मूल्य के ही मोल बिका जारहा हूँ—

(सवैया)

कपूर समान कपोलन पै बिन दाम ही मोल विकाय रहा हूँ। अमोल सुगोल निहारत आनन चन्द्र महान थकाय रहा हूँ॥ अनार प्रसून समान सुओठन को रस लेन लुभाय रहा हूँ। स्वरूप प्रिया तुम्हरो लखि के सब होश हवास गँवाय रहा हूँ॥

रम्भा-चलो रहने दो कुँवर साहब! इतना अधिक आगे न बढ़ो! रमारानी के अप्रसन्न होने का साधन न बनो।

शम्भु—रमा ! प्रिय रमा ! क्या तुमसे अप्रसन्न हो जायँगी ।

रम्भा—मुझसे अप्रसन्न क्यों होने लगीं ! मैं तो उनकी अनुचरी, सहचरी, समदर्शिनी, समनाम्नी और एक प्रकार से बहिन हूँ

कमला—बहिन किस प्रकार हो ?

रम्भा—और तुम भी मेरी बहिन हो ।

कमला—बतलाओ किस प्रकार ?

रम्भा—नाम के अनुसार कमला अथवा रमा और रम्भा दोनों ही नीरनिधि से निकलने के कारण सिन्धुसुता कहलाती हैं । इस हेतु वे दोनों ही बहिन हुईं । और हम उनकी समनाम्नी हैं, अतएव हम तीनों भी बहिन हुईं ।

शम्भु—समान नाम वाली ही नहीं, बल्कि समान रूप और समान गुण वाली भी हो । अतएव तीनों ही बहिनहुईं ।

रम्भा—फिर बतलाइये रमा मुझसे क्यों अप्रसन्न होवेंगी ?

शम्भु—तो फिर किससे होवेंगी ?

रम्भा—आपसे ।

शम्भु—कैसी अनोखी और असम्भव बात कहती हो । क्या एक पतिव्रता पत्नी कभी अपने पतिसे अप्रसन्न होसकती है ? (रमा से) प्रिये रमा ! प्रियतमे ! क्या कभी तुम मुझसे अप्रसन्न होसकती हो ?

रमा—प्राणनाथ ! क्या कभी कुमुदिनी भी चन्द्रमा को देखकर सकुच सकती है ? क्या कभी चातकिनी भी मेघ से अप्रसन्न होसकती है ? क्या कभी कमलिनी भी सूर्य से

रूठ सकती है ? जिस प्रकार इन सब प्रश्नों का उत्तर है कदापि नहीं । उसी प्रकार मैं भी अपने प्राणनाथ, प्राणपति, प्रियतम, प्राणवल्लभ, प्राणाधिक प्रिय, प्राणाधार एवम् जीवनाधार भरतार से कदापि अप्रसन्न नहीं हो सकती । तुम तो मेरे जीवन के एक मात्र अवलम्ब हो । मेरे प्राणों के प्राण हो । तुमसे अप्रसन्न होकर मेरे प्राण किस प्रकार रह सकते हैं ? स्त्री का पति ही जीवनाधार है । पति के बिना उसको सूना सब संसार है । जक्त में उसके लिये चारों ओर अन्धकार है, संसार का प्रत्येक पदार्थ उसको निःसार है ।

(गाना)

जक्त में पति ही है इक सार ॥

पति सम्पति हैं, पति अतिकृति है, पति है तिय पतवार ।
गुण पदार्थ, नौका भी पति है, पति ही खेवनहार ॥
पति अवगति है, पति परमेश्वर, पति सुख का भण्डार ।
पति पत्नी का धर्म्म कर्म्म है, पति रति मति दातार ॥
पति रखता है पत पत्नी की, टालत विपति हजार ।
पति से है पतियारा तिय का, पति वनिता आधार ॥
पति से सब नारी पावन हैं, बिन पति पतित अपार ।
पति से प्रीति करें जो ललना, हों भवसागर पार ॥
पति प्रतिकूल चलें जो नारी, नहिं उनका निस्तार ।

शम्भु—यदि मैं किसी अन्य स्त्री के साथ विवाह करलूँ, क्या तब भी मुझसे अप्रसन्न न होइएगा ?

रमा—प्राणनाथ आप क्या कहते हैं ? क्या एक पतिव्रता पत्नी अपने पति रूपी परमेश्वर से कभी अप्रसन्न तथा प्रतिकूल हो सकती है ? कदापि नहीं । मैं आपसे कदापि अप्रसन्न

नहीं हो सकती। रम्भा को आपके साथ परिहास करते हुए देखकर कुछ क्षण के लिये मेरे हृदय में उसके प्रति ईर्षा उत्पन्न होगई थी, परन्तु अब वह बिलकुल विलीन होगई। उसके लिये अब मुझे अत्यन्त पश्चात्ताप है कि ऐसा कुविचार मेरे अन्तःकरण में क्यों उत्पन्न हुआ। आप सहर्ष चाहें जिसके साथ अपना दूसरा विवाह कर सकते हैं, मुझे किसी प्रकार की भी आपत्ति नहीं है। जिस स्त्री को आप पत्नी रूप में ग्रहण करेंगे उसे मैं सदैव अपनी छोटी बहिन के समान समझूँगी। पतिव्रता स्त्री को तो सदा उसीमे सुख है जिसमेंकि उसके पति को सुख है। जिस स्त्री के किसी कार्य्य द्वारा पति के हृदय, मन, एवम् आत्मा अथवा शरीर को किसी प्रकार का कष्ट पहुँचा तो वह स्त्री अत्यन्त पतित है। पतिके विपरीत चलने वाली स्त्री साक्षात् पाप का अवतार है। उसके पापों की सीमा अपार है। प्राणनाथ! तुम्हारे प्रति मेरे हृदय में जो भाव हैं, उन्हें सुनियेगा—

(गायन)

तुम सुखी रहो सानन्द रहो, मैं दुखी रहूँ परवाह नहीं।
मुझपर दुख-गिरि गिरपड़े, किन्तु मुखसे निकलेगी आह नहीं॥
दुःसह से दुःसह दुःख नाथ, मैं स्वयं सदा सह सकती हूँ।
पर तुमको दुखी देखकर, मैं सुखसे न कहीं रह सकती हूँ॥
मुझको चाहे मत दर्शन दो, पर दुनियाँ का उपकार करो।
मेरी सुधि भले भूल जाओ, पर दीन जनों को प्यार करो॥
जगके सब धन-बल-हीनों का दुख दूर करो भय चूर करो।
अज्ञान-अविद्या नष्ट करो, दुष्टों का सारा दर्प हरो॥
प्राणेश! न तुम बेचैन रहो, मैं नित्य विकल बेचैन रहूँ।

तुम हर्षित विकसित सदा रहो; मैं कभी न सूखे नैन रहूँ ।

शम्भु—अच्छा, मैं रम्भा को प्यार करता हूँ । यदि रम्भा की भी मेरे साथ विवाह करने की इच्छा होगी तो हम दोनों विवाह कर लेंगे । रम्भाके साथ विवाह करने की पिताजी से भी किसी न किसी प्रकार आज्ञा प्राप्त कर लूंगा । परन्तु ऐसा करने से तुमको किसी प्रकार का कष्ट तो नहीं होगा ।

रमा—प्राणनाथ ! आप सहर्ष विवाह कीजिये । मुझको कभी किसी प्रकार का कष्ट नहीं होसकता । जिस कार्य्य से स्वामी को सुखहै, उससे दासी को भी सदैव परमानन्द है । यदि रम्भा के साथ विवाह करने की आज्ञा आपको देने में पिताजी कुछ आपत्ति करेंगे तो मैं स्वयं उनसे प्रार्थना करके आपको आज्ञा दिलादूँगी ।

शम्भु—प्रिये ! तुम सचमुच देवी हो । तुम पत्नी का सच्चा कर्त्तव्य पालन कर रही हो । मैं धन्य हूँ जो मुझे तुम्हारे समान पतिव्रता स्त्री प्राप्त हुई है । तुम यथार्थ में एक अमूल्य स्त्री रत्न हो ।

रमा—प्राणनाथ ! अधिक प्रशंसा करके दासी को लज्जित न कीजिये । अब बहिन रम्भा से पूछिये कि वह आपके साथ विवाह करने को राजी है या नहीं । यदि राजी न होगी तो मैं उसकी निशिवासर सेवा करूंगी । उसकी अनुचरी का पद ग्रहण करूंगी, अनेक प्रकार से उसकी चाटुकारता करूंगी और उसको आपके साथ विवाह करने को राजी करलूँगी । वह भी एक उच्च वंशोत्पन्न क्षत्रिय की कन्या है और आप उसे पत्नी रूपमें ग्रहण करने के लिये सर्वथा योग्य

हैं। अतएव मुझे पूर्ण आशा है कि वह आपके साथ विवाह करने में किसी प्रकार का भी संकोच न करेगी।

शम्भु-(रम्भा से) प्रिये रम्भा! अब बतलाओ कि तुम मेरे साथ विवाह करने को उद्यत हो या नहीं। तुमने मेरे हृदय को आहत कर डाला है। मेरे हृदय रूपी नगर पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया है। तुम्हारे चरणकमलों में मेरा सर्वस्व निछावर है।

रम्भा—मेरे पास कौनसा अस्त्र है जिससे आपके हृदय को घायल कर दिया है। और कौनसी सेना है जिसके द्वारा आपके हृदयपुर पर अधिकार जमा लिया है। (कटाक्ष करके) आप व्यर्थ क्यों मेरे ऊपर दोषारोपण करते हैं?

शम्भुजी-(हँस कर) भला सुन्दरियों को कौनसे शस्त्र तथा सेना की आवश्यकता है। विधाता ने उनको तो स्वयं ही प्रत्येक शस्त्र दे रखा है। फिर उनको मनुष्यों के बनाये हुए अस्त्र-शस्त्र धारण करने की आवश्यकता ही क्या है? वे अपने केवल एक कटाक्ष बाण से ही बड़े बड़े वीर और योद्धाओं को मृतक समान बना देती हैं। उनका सारा अभिमान भुला देती हैं।

❀ सवैया ❀

(१) चञ्चल भौंह चलैं चहुँओर नचावति नैनन को सुकुमारी। चाव समेत हँसैं मुसकावति बार सिंगार लजावति भारी॥ घूंघट खोल लखैं झिझकैं सकुचाति दिखावति हैं छवि प्यारी। नारि उचारति बैन सुधासम मात होवे सुनि कोकिल कारी।

(२) कबहूँ उझकैं चहुँओर लखैं कबहूँ झिझकैं निज

नाज बतावें। मुख मोरि हँसें सिहरें सिसकें अलसाति मदा अपनी दिखलावें॥ कछु नैन चलें कछु हाथ हिलें कछु पैर हिलें सब अङ्ग हिलावें। बहु भाँति दिखावति यौवन को इन शस्त्रन की तिय मार लगावें।

रम्भा—(मुसकाकर) वाह। इस समय तो तुम सचमुच कवि बन गए हो।

शम्भु—तुम्हारे प्रेम मे मैं सब कुछ बन गया हूँ। और न मालूम क्या क्या न बनजाऊंगा।

चैन पड़ता है नहीं मैं इश्क का बीमार हूँ।
आपका ही जान मन, मैं तालिबे दीदार हूँ॥

रम्भा—मुझे तुम कितने दिनों से प्यार कर रहे हो?

शम्भु—लगभग एक साल से मैं तुमको मनही मन प्यार कर रहा था। आज के पूर्व मेरे मन का भाव किसी ने नहीं जान पाया था। परन्तु आज तुम्हारा अपूर्व सौन्दर्य, अनुपम रूप लावण्य और अद्भुत यौवन प्रभा का दर्शन करके, मेरा मन मेरे अधिकार से निकल गया। वह बलपूर्वक मुझसे युद्ध करके स्वतन्त्र होगया। इस कारण मेरा रहस्य भी सब पर प्रकट होगया। अब तुम पूर्ण रूप से यौवनावस्था में पदार्पण कर चुकी हो, इस हेतु तुम्हारे सौन्दर्य की छटा अत्यन्त निराली है। तुम्हारी सौन्दर्य्य वाटिका यौवन रूपी वसन्त के आगमन के कारण पूर्णतः विकसित होगई है। तुम्हारे प्रत्येक अङ्ग से सुगन्धि बह रही है। प्रिये! तुम्हारे शरीर रूपी उद्यान मे—

मुख, कुच, कर सब हैं कमल, भ्रमर नयन अरु बाल।
बिम्बाफल सम अधर हैं, दोनों भुजा मृणाल॥
चन्दन सम मुखवास है, कोकिल सम है बोल।

कुन्दकली सम दन्त हैं, सुभग गुलाब कपोल ॥

रम्भा—अब आपको अधिक चाटुपटुता करने की आवश्यकता नहीं है। जो कुछ आपका मतलब हो वह अपने श्रीमुख से प्रकट करो।

शम्भु—मैं यह पूछना चाहता हूँ कि तुम मेरे साथ विवाह करने को राजी हो या नहीं।

रम्भा—प्रियतम! मैं आपको सहर्ष पतिरूप में ग्रहण करने के लिये तत्पर हूँ। मैं भी आपको बहुत दिनों से चुपके चुपके हृदय से प्यार कर रही हूँ। और मनही मन मैंने यह प्रतिज्ञा भी करली है कि यदि विवाह करूंगी तो तुम्हारे साथ करूंगी, नहीं तो आजन्म अविवाहिता रहकर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करूंगी। मेरी यह प्रतिज्ञा सदैव अटल और अचल रहेगी। तुम ही मेरे प्राणनाथ, प्रियतम, और प्राणवल्लभ हो—

केवल करती हूँ मैं, तुमको प्यार।
तुम हो प्यारे मेरे, प्राणाधार ॥
प्रियतम! मुझको हो तुम, सुखदातार।
तुम्हें बनाऊंगी मैं, निज भरतार ॥

शम्भु—तब तो फिर आनन्द ही आनन्द दृष्टि आयगा। शम्भुजी रमानाथ के अतिरिक्त रम्भापति भी कहलायगा। मेरे समान भाग्यशाली संसार में फिर कोई नहीं दिखलायगा—

तब तो मेरा भाग्य तारा सबसे ऊंचा जायगा।
स्वर्ग का आनन्द भी मुझको नहीं फिर भायगा ॥
रमा अरु रम्भा सी सुन्दर होंगी मेरी नारियाँ।
दुख दर्द गम सब दूर करती रहेंगी सुकुमारियाँ ॥

प्रभा, कमला व चञ्चला-कुँवर साहब! यदि आपका विवाह रम्भा के साथ होजायगा तो हमको क्या इनाम मिलेगा?

शम्भु—तुम सबको मुँह माँगा इनाम दिया जायगा। अब ईश्वर से हमारी मनोकामना पूर्ण करने के लिये प्रार्थना किया करो।

प्रभा०—परन्तु मैं तो इनाम में रम्भा को ही मागूँगी।

शम्भु०—रम्भा तो तुम्हारी है ही।

प्रभा०—तो फिर आप उसे क्यों छीने लेते हैं। मैं बिना मूल्य के न दूंगी।

रमा—चलो! समय अधिक होगया। मैं तुम्हें मूल्य दूँगी।

(सबका जाना)

(पर्दा गिरना)

"ड्राप सीन"

पहिला दृश्य

स्थान—दिल्ली, औरङ्गजेब का दरबार।

(सबका यथास्थान दृष्टि आना)

(दिल्ली के कुछ हिन्दू दुकानदारों का प्रवेश)

सब दुकानदार—हुजूर की दुहाई है।

औरङ्ग०—(सबको देखकर) यह कहाँ की बला आई है। (क्रोध पूर्वक) क्या मामला है? क्यों हाय २ मचाई है।

एक दुकानदार—हुजूर आपके प्रधान मन्त्री यानी वज़ीरे आज़म का पोता मिर्ज़ा तफ़रखुर बदमाशों का मुखिया बन कर उनके साथ हमारी दूकानों को लूटता है। और हमारे ऊपर अनेक प्रकार के अत्याचार करता है।

दूसरा०—हुजूर! प्रजा की रक्षा करना आपका धर्म है इस लिये उसे हिदायत होनी चाहिये कि वह आइन्दा ऐसा न करे।

तीसरा०—और हुजूर! उसको कुछ दण्ड भी मिलना चाहिये।

औरङ्ग०—चुप रहो! अगर वह काफ़िरोंको लूटता है, उनको

सताता है तो क्या कोई बुरा काम करता है ? जाओ ! दरबार से निकलो। मैं हिन्दुओं की फ़रियाद पर कुछ भी ध्यान नहीं दे सकता। अगर सुख से रहना और आराम से ज़िन्दगी बिताना चाहते हो तो मुसलमान होजाओ। नहीं तो ऐसी ही तकलीफ़ उठाओगे।

चौथा दूकान०—हुजूर बादशाह के लिये तो हिन्दू, मुसलमान या ईसाई सारी प्रजा समान हैं। सबके साथ एकसा बरताव करे यही उसका धर्म और कर्त्तव्य है।

औरङ्ग०—दरबार से निकलो। मैं अब तुम्हारी एक भी बात नहीं सुनना चाहता। अगर ज्यादा बकोगे तो सज़ा पाओगे, और ज़बरदस्ती मुसलमान बना लिये जाओगे।

सब दूकानदार—(जाते हुए)—

"जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी।
सो नृप अवशि नरक अधिकारी॥"

(प्रस्थान)

(दिलेरखाँ का प्रवेश)

दिलेरखाँ—आदाबर्ज हुजूर !

औरङ्ग०-क्या दिलेरखाँ तुम दक्खिनसे वापिस आगये ? कहो बीजापुर और गोलकुण्डा की चढ़ाइयों का क्या नतीजा रहा, क़िले फ़तह हुए या नहीं।

दिलेरखा—हुजूर ! रञ्ज के साथ कहना पड़ता है कि हमारी फ़ौजने पूरी तरह से शिकिश्त खाईहै। हमने भागकर अपनी जान बचाई है। हमारे हारजाने का यह सबब है कि बहादुर शिवाजी ने बीजापुर और गोलकुण्डा की तरफ से हमारी फौज का सामना कियाथा। अगर वह बीजापुर और गोलकुण्डा की मदद न करता और उनकी फौज का सिपह

सालार बनकर हमारी फौज से जङ्ग न करता, तो बिलाशक हमारी सिपह बीजापुर और गोलकुन्डा दोनों को फतह कर लेती। लेकिन शिवाजीकी ज़ोरदार तलवार के सामने हमारी फौज नहीं ठहर सकती। वह एकदम मैदानेजङ्ग से भाग खड़ी हुई, फिर किसी के रोके न रुकी। वास्तव में शिवाजी बला का बहादुर है। उसकी सानी का कोई दूसरा बहादुर आज तक मेरी नज़र में नहीं आया। जिस वक्त वह मैदाने जङ्ग में शेर के मानिन्द कूदताहै तो अच्छे अच्छे मुसलमान बहादुरों के छक्के छुड़ा देता है। उनके होशोहवास उड़ा देता है। अपने दुश्मन की फौज में खलबली मचा देता है। लोथों के ऊपर लोथ बिछा देता है। लाशों का ढेर लगा देता है। खून की नद्दी बहा देता है।—

शिवा सा शेर दिल देखा नहीं कोई ज़माने में।
वो होता है बड़ा खुश शत्रु के मस्तक उड़ाने में॥
हज़ारों दुश्मनों से वह अकेला जङ्ग करता है।
जो उसके सामने आता है वह तत्काल मरता है॥

औरङ्ग०—उस पहाड़ी चूहे ने तो मेरी नाक में दम कर दिया। जिसके मुँह से सुनताहूँ उसकी बहादुरी को तारीफ ही सुनता हूँ। वास्तव में वह है भी बहादुर, क्योंकि मेरी फ़ौज लगातार १९ वर्षों से उसके खिलाफ़ लड़ रहीहै तो भी उसका राज्य दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। जिस किसी को भी मैं अपना सिपह सालार बनाकर भेजताहूँ उसीको वह मारकर भगा देता है, और मुग़ल सल्तनत के किसी न किसी सूबे पर अपना कब्ज़ा कर लेता है। इससे तो मालूम होता है कि शिवाजी को मैदानेजङ्ग में हराना मेरी फौज और मेरी ताकत के बाहर है। लेकिन देखा जायगा, मैं अब खुद

मैदानेजङ्ग मे जाऊंगा, उसकी ताक़त और बहादुरी देखूंगा और अपनी दिखलाऊंगा। (पर्दा गिरना)

दृश्य दूसरा

स्थान—मिश्रजी का मकान।

(चपला का प्रवेश)

चपला—मैंने सुना है कि मेरे पति मिश्रजी ने महाराज शिवाजी की सेना मे भरती होकर समरक्षेत्र में बड़ी वीरता दिखाई है। और महाराज से बहुत बड़ा इनाम तथा रायगढ़ दरबार में एक बहुत बड़ी पदवी भी पाई है। ईश्वरको धन्यवाद है जो मुझे ऐसी खुशी की बात सुनाई है।

मिश्रजी—(प्रवेश करके) परन्तु मैंने तो तुम्हारे वियोगमें एक एक घड़ी करोड़ कल्पों के समान बिताई है। तुम्हारे दर्शन किये बिना मेरी जान लबों पर आई है। तुम्हारे चन्द्रानन को देख कर अब कल आई है।

चपला—(प्रसन्न होकर) अहा! क्या प्राणनाथ आगये? अच्छा ठहरिये! मैं अभी आरती सजा कर लाती हूं।

(जाना और शीघ्र आरती की थाली लेकर आना)

चपला—(आरती करते हुए)—

जय पति परमेश्वर प्रभो, प्राणनाथ अभिराम।
चरणों में स्वीकार हो, बारम्बार प्रणाम॥

मिश्र०-प्रिये! आज तुम मेरा जैसा सत्कार और प्रशंसा कर रही हो ऐसा पहिले तो कभी करती न थीं। आज मैं तुम्हारे विचारों में पूर्व की अपेक्षा विशेष परिवर्तन देखता हूं इसका क्या कारण है?

चपला—स्वामी! मुझको मेरी छोटी भावज ने पति भक्ति

का अमूल्य उपदेश सुनाया है। एक हिन्दू महिला का सच्चा कर्त्तव्य बताया है। स्त्री धर्म का पाठ पढ़ाया है। उसके चित्ताकर्षक उपदेश ने मेरे हृदय पर पूर्ण प्रभाव जमाया है। वह मुझको बलपूर्वक अन्धकार से प्रकाश में खींच लाया है। उसने मुझको पाप रूपी कूप में से बचाकर, ज्ञानरूपी पर्वत के सर्वोच्च शिखर पर चढ़ाया है, और एक पतिव्रता स्त्री का सच्चा सबक़ सिखाया है।—

हृदय में ज्ञान भानु का प्रकाश होगया।
अज्ञान रूपी तिमिर का अब नाश होगया॥
अविवेक से कर्त्तव्य था सारा गँवा दिया।
भाभा ने कृपा कर मुझे उससे मिला दिया॥

मित्रजी—(मुसकाकर)—

तुमने भी तो प्यारी मुझे योद्धा बना दिया।
उत्साह मुझको दिलाना तेरा ही काम है॥
रण मध्य मुझको पठाना तेरा ही काम है।
कायर को वीर बनाना तेरा ही काम है॥
मम नाम जग में कराना तेरा ही काम है।
भावज ने तेरा धर्म्म है तुझको सुझा दिया॥
तैंने भी तो प्यारी मुझे योद्धा बना दिया॥

प्रिये! मालूम होता है कि तुम बहुत दिनों से अकेली रहने के कारण, चपला से शान्ता बन गई हो। परन्तु अब मैं आगया हूँ। मैं तुम्हारी शान्ति को भङ्ग कर दूँगा। तुम्हारे होशोहवास दङ्ग कर दूँगा। नित्य तुमसे झगड़ा करूंगा, और सदैव तुमसे लड़ा करूंगा।

चपला—प्राणनाथ! ऐसा आप क्यों किया करेंगे?

मिश्र०—तुमने ही तो मुझे ऐसा करने का पाठ पढ़ा दिया है। और अब नज़ाकत के साथ पूँछती हो कि ऐसा आप क्यों किया करेंगे?

तुमने तो स्वयं ही मुझे लड़ना सिखा दिया ।
अब कहतीहो क्यों ऐसा किया करोगे पिया ॥
विपरीत प्रश्न आपने क्यों है प्रिया किया ।
तुमने ही तो प्यारी मुझे योद्धा बना दिया ॥

चपला—अच्छा ! स्वामी अब अन्दर चलिये ।

मिश्र०—अन्दर चल कर क्या बन्दर दिखलाओगी ? या मन्दर में लेजाकर घनसुन्दर के दर्शन कराओगी और पुरन्दर पर प्रसाद चढ़वाओगी ।

चपला—नहीं, आपके चरणकमल पखारूंगी, आपको स्नान कराऊँगी, और आपको भोजन परोस कर पखा हिलाऊंगी, फिर आपके लिये पर्यंक बिछाऊँगी, उस पर बिस्तर लगाऊंगी, और आपको सुलाकर आपके पैर दबाऊँगी। आपके सोजाने पर खाना खाऊँगी।

मिश्र०-परन्तु इतना काम करने से क्या तुम्हारे कमल से भी अधिक कोमल पाणि पल्लव दुख न जायँगे। भई ! मैं तो तुम्हें इतना अधिक काम कभी नहीं करने दूँगा । अपने नेत्रों से एक अबला का कष्ट कभी नहीं देख सकूंगा।

चपला—प्राणनाथ ! क्या एक पतिव्रता स्त्री को अपने स्वामी की सेवा करने में भी कभी कष्ट हो सकता है? हिन्दू ललना के कोमल से कोमल कर भी अपने पति को अहर्निश सेवा करने पर भी कदापि नहीं दुखते ।

मिश्र०—नहीं, यदि तुम्हारे शरीर पर अधिक अत्याचार किया जावेगा, तुम्हारे हाथ परों से अधिक काम लिया जावेगा और उनको कष्ट दिया जावेगा, तो अवश्य मुझको झगड़ना पड़ेगा और दोनों हाथों में तलवार लेकर झगड़ना पड़ेगा।

चपला—क्यों ?

मिश्र०—यों कि अब मैं पहले की भाँति कायर नहीं रहाहूँ, जो एक स्त्री पर अत्याचार होते और उसके शरीर को दुख पाते देखा करूं। अब मैं वीर होगयाहूँ, और वह भी तुम्हारे ही द्वारा। तुम मेरी गुरुआइन और मैं तुम्हारा चेला हूँ। फिर मैं तुम्हारे शरीर को कष्ट पाते हुए कैसे देख सकता हूँ। क्या मैं अपनी गुरु दक्षिणा न चुकाऊंगा ? क्या मैं अपनी गुरुआइनी का कष्ट न हटाऊंगा ? मैं अवश्य तुम्हारे सुख के निमित्त तलवार चलाऊंगा, और श्रोणितकी नदी बहाऊंगा क्योंकि तुमने ही—

वर वीरता के रक्त में मुझको डुबा दिया।
वीरत्व का वर पाठ भी मुझको पढ़ा दिया॥
उत्साह दिला युद्ध में मुझको पठा दिया॥
तुमने ही तो प्यारी मुझे योद्धा बना दिया॥

चपला—प्राणनाथ ! अब चलिये, विलम्ब न करिये। आप दूर से आये हैं, इस कारण आपको अवश्य भूख लग रही होगी।

मिश्र०—भूख तो अवश्य लग रही है, परन्तु यदि तुम मेरे

साथ खाओगी तो भोजन करूंगा नहीं तो फिर खड्ग खटकाऊंगा, इस घर को रक्त की नदी में बहाऊंगा, और तुमको नाव में बिठला कर सैर कराऊंगा तथा हवा खिलाऊंगा।

चपला—तलवार चलाने की आवश्यकता नहीं। मैं आपकी आज्ञा का पालन करूंगी।

मिश्र०—(चपला के गले में बांह डाल कर) तो चलो! मैं तैयार हूँ।

(गलबहियाँ डाले हुए दोनों का जाना)

(पर्दा गिरना)

तीसरा दृश्य

स्थान—रायगढ़ का राज्य महल।

(महाराज शिवाजी का एक कमरे मे रोग शय्या पर पड़े हुए और उनके निकट शम्भुजी, माधवजी, पेशवा, तानाजी, व्यंकूजी और सईबाई का बैठे हुए दृष्टि आना)

शम्भुजी—(औषधि का प्याला लिये हुए) पिताजी! औषधि पान लिये।

शिवाजी—अब औषधि पीने से क्या होता है। मुझको तो विदित होगया कि मै बच नहीं सकता।

सईबाई-प्राणनाथ! ऐसा अशुभ वचन मुख से न निका-

लिये। भेषज पान कीजिये, और भगवान विष्णु के चरणों में ध्यान दीजिये। राजीवलोचन, भक्त कष्ट मोचन राघव राम का नाम लीजिये। वे सर्वशक्तिमान, करुणानिधान, भगवान रमापति हमारे सम्पूर्ण कष्ट अपहरण करेंगे। आपके समस्त रोग को हरेंगे।

राधापति करुणानिधि केशव, सकल कष्ट को टारेंगे
सब रोग हरें दुख दूर करें, संकट से हमें निवारेंगे॥

व्यंकूजी—भाई साहब! आप सोच न कीजिये, दवा पीजिये, निराश न हूजिये। ईश्वर की अनुकम्पा से आप अवश्य निरोग होकर स्वस्थ होजायेंगे।

शिवा०—(दवा पीकर) भाई! अब क्या आरोग्य हो जाऊंगा। मुझको अपने मरने का बिल्कुल शोक नहीं है। शोक है तो केवल इसी बात का कि मैंने जो देश-सेवा और जाति सेवा का कठिन कार्य ग्रहण किया था उसको मै पूर्ण नहीं कर सका। अपने प्रिय देश भारतवर्ष और अपनी प्राण प्रिय हिन्दूजाति का दुष्ट यवनों के घोर अत्याचार से उद्धार नहीं कर सका। अपनी भव्य भारत भूमि को परतन्त्रता के कठिन बन्धन से नहीं छुड़ा सका। अपनी प्राणाधिक प्रिय हिन्दू जाति को दासता के कठोर कारागार से निस्तार कर, उसे स्वच्छन्दता नहीं दिला सका। अपनी सम्पूर्ण जाति को सुसङ्गठित कर, समस्त भारतमें एकवे महाराष्ट्र का संस्थापन नहीं कर सका। मैं अपने देश और जातिकी सेवा पूर्णरूपेण नहीं कर सका। इसी बातका मुझे मृत्यु के समय दारुण दुःख और हार्दिक वेदना है। प्राण परित्याग के पश्चात् परलोकमें भी मेरे हृदय पर "देशभक्ति और जातिभक्ति" का शब्द

लिखा जायगा। दूसरा महा दारुण दुःख इस बात का है कि मेरी मृत्यु के पश्चात् मेरे राज्याधिकारी, मेरी सन्तान, मेरे बन्धुगण और मेरे प्रिय सरदार वर्ग न मालूम मेरे उठाये हुए कार्य्य को पूरा कर सकेंगे या नहीं। अपने देश और जाति को दुष्ट अनाचारी, अत्याचारी यवनों के पंजे से छुड़ाकर स्वतन्त्र बना सकेंगे या नहीं। शम्भुजी की भोग विलास प्रियता और अकर्मण्यता ही मेरी इस चिन्ता का मूलकारण है। जो मनुष्य दिनोरात भोग विलास में ही लिप्त रहता है, जो क्षत्रियकुमार निशि वासर अन्तःपुर के भीतर रमणियों के साथ आनन्द क्रीड़ा में मग्न रहता है, वह समरक्षेत्र में वीरता प्रदर्शित कर अपने शत्रुओं को किस प्रकार पराजित कर सकता है। यही मुझको महान चिन्ता है कि मेरी मृत्यु के पश्चात् शम्भुजी एक सच्चे क्षत्रिय का कर्त्तव्य पालन करेगा या नहीं। भविष्य में मेरे आदेशानुसार चलेगा या नहीं। अपने देश और जाति का कष्ट नष्ट करने का उद्योग तन, मन, धन तथा प्राण पण से करेगा या नहीं।

(राजाराम, ताराबाई, रमाबाई और रम्भाबाई का प्रवेश)

राजाराम—(प्रवेश करके) पिताजी! इस बात की आप चिन्ता न कीजिये। यदि भाई साहब शम्भुजी आपकी आज्ञा का यथोचित रीति से पालन न करेंगे तो मैं, आपके सम्मुख प्रतिज्ञा पूर्वक कहता हूँ कि मैं आपकी आज्ञानुसार अपने देश भव्य भारत और अपनी प्यारी हिन्दू जाति की सेवा शरीर, धन और प्राण सर्वस्व निछावर करके सदैव करूंगा। यदि अपने देश और जाति के सुख के निमित्त, मुझको अपना

शीश भी भेंट करना पड़े तो मैं किंचित मात्र भी नहीं हिचकिचाऊंगा।

यदि प्राण जांय देश हेतु कुछ भी ग़म नहीं।
निज प्रण को जो है तोड़ देवे ऐसे हम नहीं॥
जो कह दिया जबान से वह करके रहूँगा।
रण करने काल आयगा तो भी न हटूंगा॥
संग्राम में दुष्टों के मुण्ड धड़ से उड़ा दूँ।
निज जाति के हित हेतु रक्त सिन्धु बहादूँ॥

तारा०—पिताजी! और यदि ये भी संग्राम में कदाचित् वीर गति को प्राप्त हुए और स्वदेश तथा स्वजाति को पूर्ण स्वतन्त्र बनाने में असफल रहे तो मैं प्रतिज्ञा करती हूँ कि भारत और हिन्दूजाति की स्वाधीनता के निमित्त, एवम् आप की आत्मा को शान्ति प्रदान करने के हेतु मैं सती नहीं हूँगी, बल्कि प्राण रहते अपनी जाति तथा देश को दुष्ट अनाचारी यवनों के घोर अन्याय तथा अत्याचारों से छुड़ाने के हेतु सदैव वीरों की भाँति मुसलमानों से युद्ध करूंगी। उनके सम्पूर्ण अभिमान को हरूंगी और संसार को बता दूंगी कि जक्त में ऐसा कौनसा कठिन कार्य्य है जिसे एक हिन्दू रमणी नहीं कर सकती। मैं अबला से सबला बनूंगी। सुकुमारी से चण्डी का रूप धरूंगी, अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करूंगी, और अवश्य करूंगी।

बादल भी चाहे नीर का बरसाना छोड़दें।
विधि, विष्णु, रवि कर्तव्य से मुख चाहे मोड़दें॥
बौने पकड़के चन्द्र को पृथवी से जोड़ दें।
चाहे कमल की डंडियाँ हीरों को फोड़ दें॥

सम्भव भले हो कूप में सब नभ का डूबना ।
मुमकिन मगर नहीं है मेरे प्रण का टूटना ॥

शिवाजी—शाबाश ! पुत्री शाबाश ! तुम दोनों ने मेरी आत्मा को शान्त कर दिया । मेरे हृदय में आनन्द सागर भर दिया । अब मैं चैन के साथ मरूंगा । मैं सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वह तुम दोनों की प्रतिज्ञा को पूर्ण करे और तुम्हारे समान ही, बल्कि तुमसे भी अत्यधिक शक्तिमान् एवम् बलवान तुम्हारे करोड़ों सहायक उत्पन्न करे । हे जगदीश ! इनको सहायता कर, इन्हें भक्ति और साहस प्रदान कर । तेरीही वह शक्ति है, जो निर्बलों को अत्याचारियों और अन्यायियों के चंगुल से छुड़ाती है । दीन निर्बलों को दुष्ट बलवानों के हाथों से बचाती है । हे जगत के स्वामी !—

सतगुण शक्ति साहस हो, और उत्साह वर्द्धन हो ।
कृपा तेरी से हे भगवन्, खलों का मान मर्दन हो ॥

राजाराम—पिताजी ! अब आपकी तबियत कैसी है ?

शिवाजी-पुत्र ! तबियत को अब क्या पूछता है । हमारा तो अब अन्तिम समय है, और मृत्यु के पूर्व परमात्मा से यह प्रार्थना है कि—

सम्पूर्ण जग की पूर्ण ईश्वर, कामना करता रहे ।
सब निर्बलों के कष्ट को वह सर्वदा हरता रहे ॥
मानव हृदय में प्रेम की वर भावना भरता रहे ।
असुरारि के भय से हमेशा दुष्ट-दल डरता रहे ॥

अब अधिक बोला नहीं जाता । प्राण निकलना चाहते हैं

—जय रघुपति सीतापते, राघव राजा राम ।
जय जगपति करुणानिधे, कृष्ण श्याम घनश्याम ॥
ओ३म् शान्ति, शान्ति शान्ति । (प्राण परित्याग)

सईबाई–(शिवाजी का नाड़ी आदि की परीक्षा करके) प्राणनाथ ! प्रियतम ! क्या मुझे छोड़कर अकेले ही स्वर्ग—यात्रा करदी ? क्या ऐसा करना तुमको उचितहै ? हेस्वामी! आज मुझ दासी को किस दोष के कारण इस अपार शोक पारावार में छोड़े जाते हो ?–

हे प्राणपति ! तुमने प्रथम सब भाँति अपनाया मुझे ।
किस दोष पर परित्याग कर अब दुःख दिखलाया मुझे ॥
मेरे अनेकानेक दोषों को क्षमा करते रहे ।
मेरे हृदय के ताप को तुम सर्वदा हरते रहे ॥
फिर कर रहे हो आज तुम विपरीत ऐसी बात क्यों ।
प्रभु छोड़ कर जाते कहाँ हो आज मेरा साथ क्यों ॥
तुम त्याग दो बेशक मुझे, पर मैं न त्यागूंगी तुम्हें ।
मैं आ रही हूँ स्वर्ग को अति शीघ्र पाऊंगी तुम्हें ॥
जब प्राण वल्लभ चल दिये, फिर प्राण तुम क्यों हो यहाँ ।
चलना तुम्हें भी चाहिये स्वामी तुम्हारे हों जहाँ ॥
तुम हो अभागे अति अधम, क्यों निकल जाते हो नहीं ।
चल कर यहाँ से नाथ को क्यों शीघ्र पाते हो नहीं ॥

(मूर्छित होकर गिर पड़ना)

माधव०—हा ! आज मरहठा जाति का, नहीं, समस्त हिन्दू जाति का सूर्य अस्त होगया । भारत में अब हिन्दुओं के लिये चारों ओर अन्धकार है ।—

*** गाना ***

भगवान् भानु-शिवा, नृपतिवर, अस्त क्यों तुमने किया।
था पथ-प्रदर्शक जो हमारा छीन क्यों तुमने लिया॥
हम निर्बलों का बल हरण कर दुःख क्यों हमको दिया।
अवलोक कर संकट हमारा, क्या न दुखता तव हिया॥
आदित्य के होते हुए, भारत तिमिर सम्पन्न है।
हा! देश भाग्याकाश अब अत्यन्त विपदासन्न है॥
(मूर्छित होजाता है)

व्यकूंजी—
हा! बन्धुवर, निज अनुज को किस दोष पर हो त्यागते।
किस नींद में तुम सोगये हो, जो न अब तक जागते॥
(पछाड़ खाकर गिर पड़ना)

राजाराम—हा! पिता! प्यारे पिता! अब मैं किससे पिता कहूँगा, और कौन मुझको प्रेम के साथ पुत्र कह कर पुकारेगा?—

अत्यन्त प्रेम के साथ मुझे, गोदी में कौन बिठालेगा।
अब कौन दुलारेगा मुझको, और कौन मुझे पुचकारेगा॥
(पृथ्वी पर गिर पड़ना)

शम्भु०—हा! प्राण प्यारे पिता! मुझे किस पर छोड़े जाते हो? हा! जनक जन्मदाता प्यारे! क्यों मुझे बिसारे जाते हो। हम सबको रोते हुए देखकर भी क्यों तरस न खाते हो।

तानाजी—हा महाराज! आपने यह क्या किया? जो हिन्दू जाति की नौका को अवनति सिन्धु से पार करनेके पूर्व ही स्वर्गारोहण कर दिया। अब इस भारत नौका को कौन

पार लगायगा ? कौन इसे अवनति पारावार से निकाल कर उन्नति तट पर पहुँचायगा ? आपके बिना मैं, नहीं, समस्त हिन्दू किस प्रकार धैर्य्य धारणकरेंगे—

आप बिन,हा दीन रक्षक ! धीर हम कैसे धरें ।
कुछ समझमें आता नहीं,अब क्या करें ? क्या ना करें ॥
हाय ! स्वामी हाय !

(पृथ्वी पर सिर पटकता है)

पेशवा-महाराज ! ऐसा कठोर हृदय बनाना क्या आपको उचित है ? आपतो अतिशय दयावान थे । पूर्ण करुणानिधान थे । कभी किसी का कष्ट नहीं सह सकतेथे । कभी किसीको रोते हुए नहीं लख सकते थे । फिर आज आपके स्वभाव में ऐसी प्रतिकूलता क्यों पाई जाती है ? क्या ऐसी कठोरता आपको शोभा देतीहै ? जिसको आप दूर से देखतेही अत्यन्त प्रेम के साथ बुलाकर अपने निकट बिठलाते थे । क्या आज उससे मुख से बोलना भी आप अनुचित समझते हैं । क्या ऐसा दयावान तथा गुणनिधि स्वामी मैं अपने किसी अन्य जन्म में पाऊँगा ?

(हताश होकर गिर पड़ता है)

रमा रम्भा और ताराबाई—हा ! पिता ! हमारे स्वामी के पूज्य पिता ! हमारे परम पूज्य पिता ! प्रिय पिताजी ! हम सबको शोक सिन्धु मे डुबाकर आपको स्वर्ग गमन करना क्या उचित था ?—

हा ! धर्म पिता, हा ! पूज्य पिता, क्यों हमको छोड़े जातेहो ।
वर्षों से जोड़े नाते को एक पल में तोड़े जाते हो ॥

आरत भारत के तुम्हीं, थे समुचित आधार।
निबलों को दुख सिन्धु से, कौन करेगा पार ॥
(सबका पृथ्वी पर गिर पड़ना)

(पर्दा गिरना)

दृश्य चौथा

स्थान—रायगढ़ दरबार।

शम्भुजो का राज्याभिषेक होचुका है)

(सबका यथास्थान दृष्टि आना, नाचने वालियों का नाच कर चले जाना)

(तानोजी का प्रवेश)

तानो०—(अभिवादन करने पश्चात्) श्रीमान् ! मुगल सेना ने पुनः गोलकुण्डा पर चढ़ाई की है। उसकी सहायता के लिये हमारी सेना को कूँच करने की आज्ञा दीजावे।

शम्भु०—हम गोलकुण्डा की सहायता करना नहीं चाहते। जब बीजापुर पर मुगल सेना आक्रमण करेगी तब देखा जावेगा।

तानोजी—परन्तु सन्धि के अनुसार तो उसकी सहायता करना चाहिये।

शम्भु०—गोलकुण्डा का सुलतान हमारे राज्याभिषेक के समय न तो स्वयं उपस्थित हुआ और न हमारे लिये कुछ भेंट ही भेजी। अतः हम उसकी सहायता कदापि नहीं कर सकते।

तानोजी—जैसी आपकी इच्छा !

(प्रस्थान)

दासी-(अभिवादन करके) श्रीमान् ! बड़ा महारानी साहबा के राजकुमार उत्पन्न हुआ है। मुझे यह हर्ष समाचार सुनाने का पुरस्कार दीजिये।

शम्भु०—(प्रसन्न होकर) अहा ! क्या अन्तःपुर में पुत्र हुआ है ? क्या रनवास में राजकुमार ने जन्म लिया है ? दुःख में सुख इसको कहते हैं। पिताजी के मरने का दुःख मुझको अवश्य हुआ। परन्तु वह दुःख राज्य सिंहासन पाने, रम्भा के साथ विवाह होजाने के कारण विस्मरण होगया। और अब पुत्र होने का शुभ समाचार सुनकर तो मेरा हृदय आह्लाद एवम् हर्ष से परिपूर्ण होकर कमल की भाँति खिल गया। मुझे संसार का सच्चा सुख मिल गया। पुत्र ! क्या प्यारा नाम है। पुत्र का नाम ही कैसा अभिराम है।

पुत्र, तनय, बेटा व सुत, हैं अति प्यारे नाम।
मनहर सूरत तनय की, नाम महा अभिराम ॥

(दासी की ओर देखकर)

तू क्यों खड़ी हुई है ? क्या पुरस्कार पाने के हेतु ?

दासी—जी हाँ महाराज।

शम्भु—(गले से मोतियों की माला उतारते हुए) यह ले।

(दासी माला लेकर जाती है)

शम्भु०-(मन्त्री से) पेशवाजी ! मैं रनवास में जाता हूँ। आप राजकुमार उत्पन्न होने की सब पुर, नगर में सूचना करादें। दान, और पुरस्कारादि देने में किसी प्रकार की कमी नहीं की जावे।

पेशवा-जो आज्ञा महाराज ! आपको आज्ञा का पूर्णरूप

सहस्र रजनीचरित्र (अलफलैला)

बाबू रूपकिशोर जैन द्वारा अनुवादित यह प्रसिद्ध पुस्तक है। बादशाह शहरयारको अपनी बेगमका व्यभिचार देखकर स्त्री जाति से घृणा होगई थी, रोज विवाह करता था और प्रातःकाल अपनी बेगम का बध करा डालताथा। बहुत समय के बाद मन्त्रीपुत्री शहरजाद का विवाह बादशाह के साथ हुआ। किस प्रकार उस चतुर रमणी ने हज़ार रात्रि पर्यन्त मनके हरनेवाली कहानियाँ अपने पति से कहकर अपनी जान बचाई और क्षमा लाभ कर भीषण स्त्री बधको रोका यह सब इसमें वर्णित है। इसमें कितने ही अच्छे २ किस्से हैं परन्तु शहरयार और शाहजमा, सिन्दबाद जहाजी, अलादीन और विचित्र दीपक एव अलीबाबा और चालीस चोर आदि के किस्से बड़े और दिलचस्प हैं। पृष्ठ संख्या ७०० मूल्य २) रु०

दास्तान अमीर हमजा हिन्दी।

हिन्दी भाषा में यह प्रसिद्ध पुस्तक है। इसमें अमीर हमजा नामी बड़े साहसी और शूरवीर का वर्णनहै। जिसने अपनी शक्ति और बलसे नौशेरवाँ जैसे बादशाहों, और काफ के देवों और जिन्नों को पराजय करदिया था। यह किस्सा इसकदर दिलचस्प और मजेदार है कि पढ़नेवाले के चारों तरफ सुनने वालों की भीड़ एकत्र होजातीहै। अनुवादकहैं मुं० चन्द्रीप्रसाद जी जैन और बाबू रूपकिशोरजी जैन, जिन्होंने अति सरल हिन्दी भाषा में इसका उलथा कियाहै। पुस्तक चार भागों में समाप्त हुई है पृष्ठ सं० ८०० है मूल्य २)

औरङ्गजेब ।

अर्थात् बर्नियर की भारत यात्रा इस पुस्तक में शाह-जहाँ, दारा शिकोह, शुजा, औरङ्गजेब, मुराद, जहाँनआरा, रोशनआरा, वेगम तथा प्रधानतः अनेक युक्तियों से औरङ्ग-जेब के गद्दी पर बैठने का हाल है, ऐतिहासिक घटनाओं से भरी मुगल बादशाहों के चरित्रों की अद्वितीय पुस्तक है छः भाग में समाप्त हुई है । की० २)

भीषण सन्देह ।

इसमे निम्नलिखित ५ गल्पें अत्यन्त मनोहर हैं (१) भीषण सन्देह, यह सच्ची घटना है । व्यर्थ सन्देह करके हम अपना कितना अनिष्ट कर बैठतेहैं यह भली भाँति दर्शायाहै । (२) अधःपतन, धन में ही सब सुख निहित नहीं है, यदि उचित उपायों द्वारा धन उपार्जन नहीं किया जाताहै तो सब को निरन्तर दुःखका कारण और अन्त मे नाश अवश्यम्भावी है । (३) विजय, क्रान्तिकारी विजय की साहसमयी क्रिया शीलता शौर्य गाथा हृदय को देश और राज भक्ति से भर देती है । (४) अभागे का भाग्य । सौत द्वारा संतानके प्रति भीषण अत्याचार होता है । पिता दूसरी स्त्री के वाकजाल में ऐसा फँसता है कि वस्तुस्थिति को न समझ कर नितान्त अंधा होकर काम करता है । (५) पातिव्रत्य-सुन्दर युवती को जाल मे फँसाने का लम्पट द्वारा उद्योग किया गया है परन्तु सती के तेज बल से अन्तमें विफल हुआ है । मू० ॥)